तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

जुलाई-2021 रु.5/-

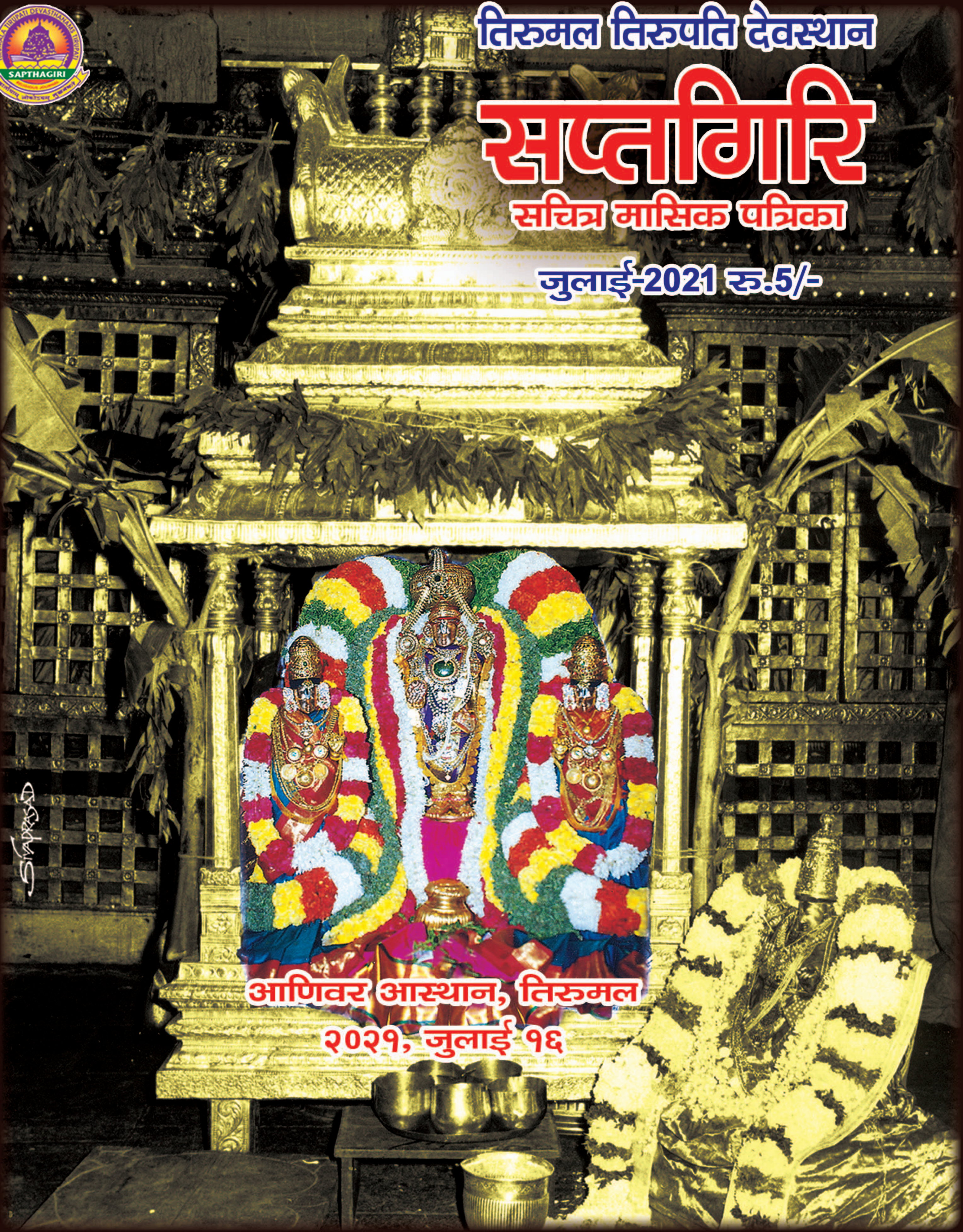

आणिवर आस्थान, तिरुमल
२०२१, जुलाई १६

तिरुमल श्रीबालाजी के मंदिर में संपन्न ज्येष्ठाभिषेक महोत्सव के दृश्य।
२०२१, जून २२ से २४ तक

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥२०॥
हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।

(- श्रीमद्भगवद्गीता १-२०)

हे धृतराष्ट्र महाराज! इसके पश्चात् जब युद्ध क्षेत्र में अस्त्रों का प्रयोग करने उद्यत हुए तब कपिध्वज अर्जुन ने युद्ध के लिए सनद्ध कौरवों को देख कर, धनुष को हाथ में लेकर श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा।

गीता पुस्तक संयुक्तः प्राणां स्त्यक्त्वा प्रयाति यः।
स वैकुण्ठ मवाप्नोति विष्णुना सह मोदते॥

(- गीता मकरंद, गीता की महिमा)

जो मनुष्य गीता ग्रन्थ हाथ में लेकर प्राण त्याग देगा वह वैकुंठ को प्राप्त होकर विष्णु के साथ आनंद का अनुभव प्राप्त करेगा।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास

"मानव सेवा ही माधव सेवा है" - इसी लक्ष्य के साथ, ति.ति.दे. विविध हितकर कार्यों का निर्वहण समाज के लिए कर रही है। इस क्रम में ति.ति.दे. ने १९४३ वर्ष में अनाथ बाल बच्चों के संरक्षणार्थ 'श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर (तिरुपति) न्यास' की स्थापना की। आजकल 'श्री वेंकटेश्वर बालमंदिर न्यास', श्री वेंकटेश्वर जलनिधि योजना, कल्याणमस्तु न्यास, श्री वेंकटेश्वर समाचार सांकेतिक न्यास आदि को अपने में मिलाकर 'श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास' के रूप में परिणत हुआ है।

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास के लक्ष्य

01) अनाथ बाल बालिकाओं, वृद्ध, निराश्रित, अभागे, निर्धन एवं निर्बलवर्ग के व्यक्तियों की अभिवृद्धि, रक्षा, उनके कुशल क्षेम के लिए धर्मशालाओं एवं आवास प्रदत्त करना। अनाथ एवं निर्धन विद्यार्थी-विद्यार्थियों को आर्थिक रूप से सशक्त करना।

02) दिव्यांगों एवं मनोरोगियों के लिए आवश्यक चिकित्सा की सुविधाओं की व्यवस्था करना एवं उनके जीवन शैली को सुधारना। इस प्रक्रिया में किसी वर्ग एवं वर्ण भेद को त्यागकर सभी लोगों को एक ही स्तर में स्वीकार करना।

03) बाढ़, अकाल जैसी प्रकृतिक विपत्ति के संभवित समय में, अग्निफैलान जैसी अवांछनीय विपत्ति के उठने पर, तक्षण उनकी सहायता के लिए तैयार रहना।

04) जो बच्चे बहरे या मूक होते हैं, उनकी उन्नति के लिए पुनर्वास केन्द्रों की व्यवस्था करना।

05) उपर्युक्त लोप से त्रस्त ग्रामीण बाल बच्चों के लिए आवश्यक उपकरणों का वितरण करने के साथ-साथ उनको शिक्षा प्रदान करना।

06) समाज में पीने के पानी, जो अत्यधिक आवश्यक पेय पदार्थ है, उसको उपलब्ध कराना, तिरुमल पंचायती तथा तिरुपति नगर पालिका के लिए आवश्यक जल संसाधन की पूर्ति के लिए पुल एवं तालाबों का निर्माण करना। पानी के मितव्यय के लिए आवश्यक कार्यवाही करना।

07) पाठ्य पुस्तकों के साथ, इंटरनेट (अंतर्जाल) जैसी आधुनिक, सांकेतिक सुविधाओं को उपलब्ध कराकर, उसके द्वारा हमारे देश का इतिहास, सांस्कृतिक दाय प्राप्त संपदा को भावी पीढ़ियों तक पहुँचाना।

08) समाज में शिष्टाचार तथा नैतिक मूल्यों के विकास के लिए युवा पीढ़ी में आत्मविश्वास को बढाना।

09) विवाह संपन्न कराने के द्वारा हितैषी के रूप में वधू-वर को आत्मविश्वास तथा गौरव के साथ जीवनयापन करने के लिए योग्य बनाना।

10) जो व्यक्ति उपर्युक्त कार्यक्रमों में कार्यरत हैं, उन व्यक्तियों तथा संस्थाओं की मदद करना। जो भी कार्य चालू हैं उनको बिना किसी लाभ की अपेक्षा किये, लक्ष्यसिद्धि को प्राप्त करना।

श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास के लिए इस रूप में चंदा भेजिए...

01) इस योजना के लिए कम से कम रु.१,०००/- भेजें।

02) अगर, चंदा रु.१०००/- से कम हो, तब उसे श्रीवारि हुण्डी के खाते में जमा किया जाता है और चंदादार को इसके बारे में कोई सूचना नहीं दी जाती है। सभी चंदादारों की चंदा किसी राष्ट्रीय बैंक में जमा की जाती हैं और उस पर जो सूद मिलता है, उसे उक्त योजनाओं के लिए खर्च किये जाते हैं। आप, अपनी चंदा को किसी राष्ट्रीय बैंक से, चेक या डिमांड ड्राफ्ट के द्वारा 'श्री कार्यनिर्वहणाधिकारी, श्री वेंकटेश्वर सर्वश्रेयस् न्यास, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम पर लेकर, 'प्रधान गणांकाधिकारी (चीफ़ अकौण्ट्स आफ़ीसर), ति.ति.दे., तिरुपति - ५१७ ५०७' के नाम पर भेज सकते हैं।

अन्य विवरण के लिए दूरभाष - ०८७७-२२६४२५८ को संपर्क करें।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।

वर्ष-५२ जुलाई-२०२१ अंक-०२

विषयसूची

जगन्नाथ रथयात्रा	डॉ.बी.के.माधवी	07
'तुलसी' का माहात्म्य	श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालीया	10
गुरु वेदव्यास	श्री पी.श्रीनिवासुलु	13
अर्थ पंचक	श्रीमती शिल्पा केशव रांदड़	16
श्रीरंगम रंगनाथस्वामी मंदिर	डॉ.एच्.एन.गौरी राव	19
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	23
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	25
नैच्यानुसंधान	श्रीमती रूपाली गोविंद रांदड़	31
श्री वेंकटेश सुप्रभात	श्री यू.वी.पी.बी.श्रीनिवासाचार्यजी	35
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	38
मंगलाशासन पाशुरम्	श्री के.रामनाथन	40
श्रीमद्भगवद्गीता	श्री बी.राजीव रत्न	42
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव प्रो.गोपाल शर्मा	44
सनातन वैद्य में नागरमोथा	डॉ.एस.हरि	47
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	49
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	50
बालनीति - पत्थर की शक्ति	श्रीमती के.प्रेमा रामनाथन	51
चित्रकथा - वेदव्यास आविर्भाव	डॉ.एम.रजनी	52
क्विज	कुमारी एन.प्रत्यूषा	54

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

गौरव संपादक
डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
आचार्य के.राजगोपालन्

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशी वार्षिक चंदा .. रु.850-00

मुखचित्र - आणिवर आस्थान, तिरुमल।
चौथा कवर पृष्ठ - साक्षात्कार वैभव श्रीनिवासमंगापुरम्।

अन्य विवरण के लिएः
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
- प्रधान संपादक

"गुरु पूर्णिमा"

शास्त्रों में ''गुरु'' का अर्थ बताया गया है - प्रथम अक्षर ''गु'' का अर्थ - ''अंधकार'' होता है। जबकि दूसरे अक्षर ''रु'' का अर्थ - ''उसको हटानेवाला'' होता है। अर्थात् अंधकार को हटाकर प्रकाश की ओर ले जाने वाले को ''गुरु'' कहा जाता है। गुरु वह है जो अज्ञान का निराकरण करता है, धर्म का मार्ग दिखाता है। *''गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरु स्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।''*

गुरु को त्रिमूर्तियों का प्रतिरूप माना जाता है। भगवान और गुरु को हम एक ही समान देखते हैं। हैन्दव संस्कृति में गुरु को अत्यन्त विशिष्ट तथा पवित्र स्थान दिया जाता है। लौकिक या अलौकिक विद्यावों को सीखने में गुरु की जितनी आवश्यकता होती है, हम शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकते। इसीलिए कहते है कि- 'बिना गुरु की विद्या अन्ध विद्या है।'

गुरु ने जो नियम बताए हैं उन नियमों पर श्रद्धा से चलना उस संप्रदाय के पालन करना शिष्य का परम कर्तव्य है। गुरु का कार्य नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं को हल करना भी है। छात्र पूर्व काल में गुरु के पास जाकर ज्ञानार्जन ग्रहण कर सकते है। लेकिन आज ऐसा स्थिति नहीं है। ऑन लाइन शिक्षण कार्यक्रम चालू हो रही है। इस स्थिति बदल कर पूर्व वैभव आने, तो छात्र का शारीरिक, मानसिक विकास में वृद्धि मिलती है।

राजा दशरथ के दरबार में गुरु वशिष्ट से भला कौन परिचित नहीं है, जिनकी सलाह के बगैर दरबार का कोई भी कार्य नहीं होता था। गुरु की भूमिका भारत में केवल आध्यात्म या धार्मिकता तक ही सीमित नहीं रही है, देश पर राजनीतिक विपदा आने पर गुरु ने देश को उचित सलाह देकर विपदा से उबारा भी है। अर्थात् अनादिकाल से गुरु ने शिष्य का हर क्षेत्र में व्यापक एवं समग्रता से मार्ग दर्शन किया है। अतः सद्गुरु की ऐसी महिमा के कारण उसका व्यक्तित्व माता-पिता से भी ऊपर है।

संत कबीर कहते हैं - हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर'' अर्थात् भगवान के रूठ ने पर तो गुरु की शरण रक्षा कर सकती है। किंतु गुरु के रूठ ने पर कहीं भी शरण मिलना संभव नहीं है।

आषाढ माह पूर्णिमा को ही 'गुरु पूर्णिमा' के जैसा मनाने के लिए कारण श्रीमहाविष्णु ही व्यास के रूप में जन्म लेकर हमको महाभारत पवित्र ग्रंथ को सौंपा था। वेदों का भी चार भागों में विभक्त करके वेद राशि को सरलीकृत किया था। महर्षि वेदव्यास एक अलौकिक शक्तिसंपन्न महापुरुष थे। सभी शास्त्रों को, धर्मों को, पुराणों को हमको प्रदान करनेवाली धन्यजीवि महर्षि वेदव्यास है। ऐसे महानुभाव को हम सदा स्मरण करते हुए गुरुपूजोत्सव संपन्न करते हैं।

'व्यासो नारायणो हरिः!'

जगन्नाथ रथयात्रा

- डॉ.बी.के.माधवी,
मोबाइल - ९४४१६४६०४५

पूरी क्षेत्र को इन्द्रद्युम्न पालन करते समय लोगों को किसी प्रकार कि चिंता नही थी। वे खुशहाली जीवन बिताते थे। इन्द्रद्युम्न श्री महाविष्णु का भक्त था। हर दिन विष्णु की पूजा करता था।

एक दिन के रात विष्णु भगवान ने इन्द्रद्युम्न को सपने में साक्षात्कार होकर कहा कि - ''हे राजा! तुम्हे समुंदर में लकडियाँ दिखेंगे। उन से शिल्प बनाओ।'' कहकर अदृश्य हो गए। इन्द्रद्युम्न तुरंत नींद से जागकर अपने सपने के बारे में पट्टमहिषी गुडुंबादेवी से कहा। अगले दिन राजा सती समेत सागर के तट के यहाँ गये। सपने में कहने के जैसे ही समुंदर में लकडी का काट तैरते हुए आती दिखाई दी।

तुरंत राजा ने अपनी सेनाओं से उस लकडी के काट को बाहर लाने को कहा। सैनिकों ने लकडी के काट को बाहर ले आये। उसी समय विष्णु भगवान और विश्वकर्मा दोनों वृद्ध शिल्पकारों के रूप में वहाँ आये। उन लोगों ने लकडी से विग्रह बनाने के लिए महाराज से कहा। महाराज बहुत खुश हुआ। अंतःपुर के मंदिर में लकडी के काट को रखे थे।

विश्वकर्मा ने महाराज से कहा कि - ''हम दोनों मिलकर लकडी के काट से विग्रह बनायेंगे। लेकिन विग्रहों की तैयारी करते समय हमें कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए।'' ऐसे कहकर दोनों मंदिर में गये। दस दिन बीत गये। जब मंदिर में गये दोनों शिल्पकार बाहर नहीं आये, राजा को कुछ नहीं सूझा। महाराज ने इसी कौतूहल से मंदिर में तो तब देखने केलिए गये कि-विग्रहों की पूर्ति हुई है या नहीं। राजा के अंदर जाते ही वहाँ दोनों शिल्पकार अदृश्य हो गये।

विग्रहों का आधा भाग ही पूरा हुआ देख महाराज अपनी गलती को याद करके बहुत चिंतित हुए। तदनंतर

असंपूर्ण कृष्ण, बलराम, सुभद्रा के विग्रहों को वैसे ही प्रतिष्ठित किये थे। इसीलिए ये विग्रह असंपूर्ण रूप में ही दर्शन देती हैं।

उसी राजवंशीय आज भी जगन्नाथ के रथयात्रा के आगे स्वर्ण झाड़ू की छडे से साफ करते हैं। उनके अनुपस्थित रथयात्रा नहीं होती। जनता के मन की इच्छाओं को पूरा करने देवता के रूप में जगन्नाथ भक्तजनों की पूजाएँ स्वीकार कर रहे हैं। ''नाथों का नाथ जगन्नाथ'' यह लोकोक्ति है। यानि कि सारे देवताओं के देवता ओडिशा के पूरी शहर में विराजमान है। ऐसे स्वामी को रथोत्सव के समय में दर्शन करना सौभाग्य है। इसीलिए वेदों में कहा गया है कि- ''रथेच वामनं दृष्ट्वा पुनर्जन्म न विद्यते'' अर्थात् भक्तजनों का विश्वास है कि रथ पर आरूढ श्री जगन्नाथस्वामी का दर्शन करने से पुनर्जन्म नहीं रहेगा। कृष्ण के कई रूपों में जगन्नाथस्वामी का भी एक रूप है। पद्मपुराण में नारद ने प्रह्लाद से कहा था कि- ''जो जन जगन्नाथ रथ का दर्शन करेगा, तथा जो रथ का आह्वान करेगा वह सारे पापों से विमुक्त हो जायेंगे।''

स्कंदपुराण के द्वारा विदित होता है कि- कई लाखों सालों के पूर्व से ही रथयात्रा को चलाया जा रहा है। कपिलसंहिता में भी पूरी जगन्नाथ रथयात्रा के बारे में लिखा हुआ है। इतना ही नहीं बहुत बडे रथों में जुलूस निकलना बहुत अच्छा लगता है। इसीलिए देश के सारे कोनों से लाखों लोग इस उत्सव को देखने के लिए, रथ को खींचने के लिए आते हैं।

देश के लाखों, करोडों मंदिरों की देवताओं के जुलूस में उत्सवमूर्ति भाग लेते हैं। लेकिन **इस यात्रा में खुद जगन्नाथ अर्थात् मूलविराट रथ पर शोभित होकर निजरूप दर्शन देते है।**

पूरी जगन्नाथ मंदिर में विदेशी लोग, अन्य मत के लोगों को अंदर प्रवेश नहीं देते। लेकिन इस समय में खुद स्वामी ही लोगों के बीच में आता है। कई विदेशों से हजारों यात्रीगण इस रथयात्रा के समय पूरी क्षेत्र आते हैं।

हर साल मनानेवाले इस रथयात्रा आषाढ़ शुक्ल द्वितीय दिन शुरू होता है। जगन्नाथ! अर्थात् श्रीकृष्ण, बलभद्र, सुभद्राओं के देवता मूर्तियों को जगन्नाथ मंदिर से लेकर गुंडिचा मंदिर तक जुलूस निकालते हुए वहाँ आठ रातों के बीतने पर नौंवे दिन वापस लाते हैं। इस प्रकार वापस आने को 'बहुडा' यात्रा कहते हैं।

मंदिरों के रूप में स्थित तीन रथों पर राचवीधि (बोडोदंडो) की ओर से लगभग तीन किलोमीटर दूर तक प्रयाण करके गुंडिचा मंदिर में पहुँचती हैं। रथों को बाँधेगये रस्सियों को खींचनेवाले, हजारों भक्तजन, रास्तेभर भक्तजनों के गीतों से, मृदंग वाद्य, भजन, कीर्तन आदि वायिद्यों से अत्यंत कोलाहल से इस रथयात्रा निकलती है। इसी को गुंडिचा यात्रा, घोषयात्रा, दशावतार यात्रा, नवदिन यात्रा आदि कई नामों से पुकारते हैं।

जनसमूह से भरा इस यात्रा को केवल हमारे देश में ही नहीं, बल्कि कई विदेशों में भी दूरदर्शन में प्रत्यक्ष प्रसार करते हैं। जो भक्त कलियुग में भगवान श्रीकृष्ण के जगन्नाथ रथयात्रा के समय दर्शन करता है, उनके सारे पाप एवं बाधाएँ नष्ट हो जाते हैं। इन नौ दिनों में रथ को, रस्सियों को, रथ के पहियों को एक बार छूने से उस जगन्नाथ का स्पर्श करने का पुण्य मिलता है। इसीलिए कठोपनिषत् में कहा गया है कि -

आत्मानाम् रथिनम विद्धि शरीरम रथमेवतु
बुद्धिं तु सारधिम विद्धि मनहप्रग्रह मेवच

अर्थात् मानव शरीर ही एक रथ के समान है, उसमें स्थित आत्मा ही भगवान है। मानव की विज्ञता उसकी आलोचनाओं को ठीक रास्ते पर चलाने वाला सारथी है।

रथों की तैयारी :

हमारे देश के कई मंदिरों के रथों में शाश्वत रूप से होते हैं परंतु यहाँ ऐसा नहीं होकर हर साल प्रत्येक पेडों से नये रूप से बनाते हैं। इन रथों की अलंकरण में भी प्राचीन सिद्धांतों के जैसे ही है।

जगन्नाथ का रथ का नाम नंदिघोष है, ४५ फुट ऊँचाई से, ४५ फुट चतुरस्त्र, १६ चक्रों से एक, ७ फुटों का परिमाण में होते है। लाल, पीले रंगों के वस्त्रों से अलंकृत किया जाता है। स्वामी स्वर्णिम रंग के रेश्मी वस्त्रों का धारण करते हैं। रथसारथि दारुक, काले घोडे, झंडा का नाम त्रैलोक्यमोहिनि, गरुड रक्षक है।

बलभद्र के रथ का नाम तालध्वज है, चक्र-१४, ऊँचाई-४३.३ कदम, लाल, नीले वस्त्रों की आच्छादन, रक्षक वासुदेव, सारथि मातलि, झंडा 'उन्नति', घोडे सफेद रंग का है।

सुभद्रा के रथ का नाम दर्पदल / पद्मदल / देवदलन आदि है। पहिये १२, ऊँचाई ४२.३ कदम, लाल, काले रंगों का वस्त्राच्छादन, सारथि अर्जुन, दुर्गादेवी रक्षक, घोडे लाल रंग के है।

तीनों रथ निकलते समय आगे दसपल्ला राजु आकर रथों के आगे स्वर्ण झाडू की छड़ें से साफ करते हैं। भगवान की दृष्टि में राजा हो या सामान्य मानव कोई भी एक ही है यानि भगवान की दृष्टि में दोनों समान ही हैं। इसके निदर्शन के रूप में इस प्रक्रिया को किया जाता है इसको 'चेरी पहर' कहते हैं।

दोपहर ३.३० बजे निकले रथ अंधेरे होने से पहले यानि ५ या ६ बजे गुंडिचा मंदिर पहुँचती हैं। वहाँ पहुँचने के बाद जगन्नाथ को दशावतारों के वेषों में हर रोज एक-एक अवतारों

का अलंकरण करते हैं। गुंडिचा मंदिर में भगवान का दर्शन करने से हजार अश्वमेध याग करने का फल मिलता है।

अर्थासिनि या मौसिमा

नौंवे दिन शास्त्रोक्त विधियों के बाद जगन्नाथ, बलभद्र, सुभद्रादेवी निजमंदिर में वापस आते हैं। बीच में उनकी चाची के घर (मौसिमा) के पास रुक कर 'पोडोपिठा' अर्थात् पत्थरों के बीच रखकर जलाकर तैयार किये गये मिठाई को खाते हैं। यह ओडिशा का ही प्रत्येक मिठाई है, जगन्नाथ को प्रिय मिठाई भी कहते हैं। ''अर्थासिनि देवी' को जगन्नाथ की चाची (मौसी) के रूप में पूजा करते हैं।

रथयात्रा के नौ दिनों में पूरी में किसी की भी मृत्यु नहीं होती। इसलिए इस गाँव को इन दिनों में ''यमनिका' कहते हैं। यानि यमधर्मराज डर से यहाँ कदम नहीं रखेगा। जगन्नाथ रथयात्रा ओडिशा के जगन्नाथ मंदिरों में ही नहीं न्यूयार्क, सिंगपूर, लंडन, मेलबोर्न, बुडापेस्ट, बेलफास्ट, डब्लिन, वेनिस, कौलालंपूर, धमरायि, (बंग्लादेश) जैसे और १०० देशों में भी भक्तजन इस रथोत्सव को अत्यंत उत्साह, कोलाहल से निर्वहण करते हैं।

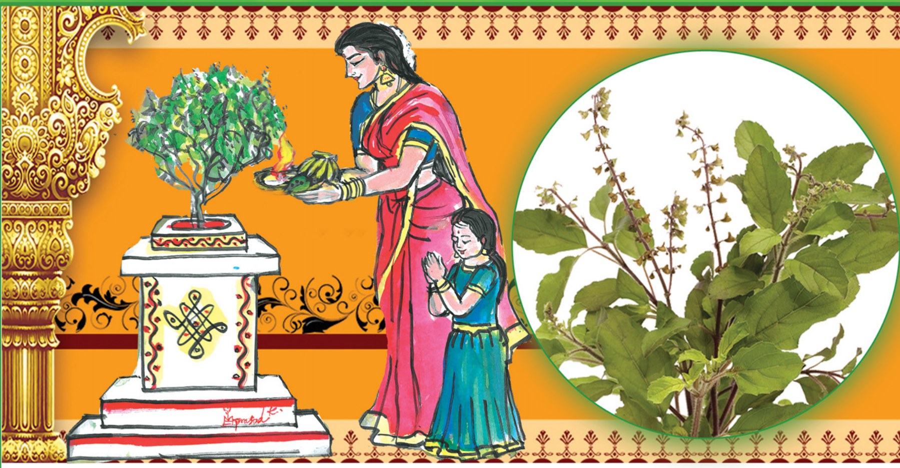

'तुलसी' का माहात्म्य

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालीया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

यन्मुले सर्वतिर्थानी यन्मध्ये सर्वदेवताः।
यदग्रे सर्ववेदाश्च तुलसी त्वं नमाम्यहम्।।

जिन के मूल में सर्व तीर्थधाम है, मध्यभाग में सर्व देवी-देवता निवास करते है, जिन के अग्रभाग में सर्व वेद है, इस तुलसीमाता को हम नमन करते है।

आज हम यहाँ इस लेख में ''तुलसी'' का सविस्तार माहात्म्य की बात करने जा रहे है।

भागवत पुराण के अनुसार माता तुलसी की संपूर्ण कथा

तुलसी से जुड़ी एक कथा बहुत प्रचलित है। श्रीमद् देवी भागवत पुराण में इनके अवतरण की दिव्य लीला कथा मिलती है। एक बार शिव ने अपने तेज को समुद्र में फेंक दिया था। उससे एक महातेजस्वी बालक ने जन्म लिया। यह बालक आगे चलकर जालंधर के नाम से पराक्रमी दैत्य राजा बना। इसकी राजधानी का नाम जालंधर नगरी था।

दैत्यराज कालनेमी की कन्या वृंदा का विवाह जालंधर से हुआ। जालंधर महाराक्षस था। अपनी सत्ता के मद में चूर उसने माता लक्ष्मी को पाने की कामना से युद्ध किया, परंतु समुद्र से ही उत्पन्न होने के कारण माता लक्ष्मी ने उसे अपने भाई के रूप में स्वीकार किया। वहाँ से पराजित होकर वह देवी पार्वती को पाने की लालसा से कैलाश पर्वत पर गया।

भगवान देवाधिदेव शिव का ही रूप धर कर माता पार्वती के समीप गया, परंतु माँ ने अपने योगबल से उसे तुरंत पहचान लिया तथा वहाँ से अंतर्ध्यान हो गयी।

देवी पार्वती ने क्रुद्ध होकर सारा वृत्तांत भगवान विष्णु को सुनाया। जालंधर की पत्नी वृंदा अत्यन्त पतिव्रता स्त्री थी। उसी के पतिव्रत धर्म की शक्ति से जालंधर ने तो मारा जाता था और न ही पराजित होता था। इसीलिए जालंधर का नाश करने के लिए वृंदा के पतिव्रत धर्म को भंग करना बहुत जरूरी था।

इसी कारण भगवान विष्णु ऋषि का वेष धारण कर वन में जा पहुँचे, जहाँ वृंदा अकेली भ्रमण कर रही थीं। भगवान के साथ दो मायावी राक्षस भी थे, जिन्हें देखकर वृंदा भयभीत हो गयी। ऋषि ने वृंदा के सामने पल में दोनों को भस्म कर दिया। उनकी शक्ति देखकर वृंदा ने कैलाश पर्वत पर महादेव के साथ युद्ध कर रहे अपने पति जालंधर के बारे में पूछा।

ऋषि ने अपने माया जाल से दो वानर प्रकट किए। एक वानर के हाथ में जालंधर का सिर था तथा दूसरे के हाथ में धड़। अपने पति की यह दशा देखकर वृंदा मूर्छित हो कर गिर पडीं। होश में आने पर उन्होंने ऋषि रूपी भगवान से विनती की कि वह उसके पति को जीवित करें।

भगवान ने अपनी माया से पुनः जालंधर का सिर धड़ से जोड़ दिया, परंतु स्वयं भी वह उसी शरीर में प्रवेश कर गए। वृंदा को इस छल का जरा आभास न हुआ। जालंधर बने भगवान के साथ वृंदा पतिव्रता का व्यवहार करने लगी, जिससे उसका सतीत्व भंग हो गया। ऐसा होते ही वृंदा का पति जालंधर युद्ध में हार गया।

इस सारी लीला का जब वृंदा को पता चला, तो उसने क्रुद्ध होकर भगवान विष्णु को शिला होने का श्राप दे दिया तथा स्वयं सती हो गयी। जहाँ वृंदा भस्म हुई, वहाँ तुलसी का पौधा उगा। भगवान विष्णु ने वृंदा से कहा, 'हे वृंदा। तुम अपने सतीत्व के कारण मुझे अधिक प्रिय हो गई हो। अब तुम तुलसी के रूप में सदा मेरे साथ रहोगी। जो मनुष्य भी मेरे शालिग्राम रूप के साथ तुलसी का विवाह करेगा उसे इस लोक और परलोक में विपुल यश प्राप्त होगा।'

जिस घर में तुलसी होती हैं, वहाँ यम के दूत भी असमय नहीं जा सकते। गंगा व नर्मदा के जल में स्नान तथा तुलसी का पूजन बराबर माना जाता है। चाहे मनुष्य कितना भी पापी क्यों न हो, मृत्यु के समय जिसके प्राण मंजरी रहित तुलसी और गंगा जल मुख में रखकर निकल जाते हैं, वह पापों से मुक्त होकर वैकुंठ धाम को प्राप्त होता है। जो मनुष्य तुलसी व आंवलों की छाया में अपने पितरों का श्राद्ध करता है, उसके पितर मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

उसी दैत्य जालंधर की यह भूमि जलंधर नाम से विख्यात है। सती वृंदा का मंदिर मोहल्ला कोट किशनचंद में स्थित है। कहते हैं इस स्थान पर एक प्राचीन गुफा थी, जो सीधी हरिद्वार तक जाती थी। सच्चे मन से ४० दिन तक सती वृंदा देवी के मंदिर में पूजा करने से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

आध्यात्मिक माहात्म्य

संस्कृत में तुलसी को 'हरिप्रिया' कहते हैं, धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि तुलसी लगाने से, पालने से, सींचने से, इसके दर्शन करने से, स्पर्श करने से लोगों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

तुलसी से प्रार्थना की गयी है, 'हे तुलसी! आप सम्पूर्ण सौभाग्यों को बढ़ाने वाली हैं, सदा आधि-व्याधि को मिटाती हैं, आपको नमस्कार है।'

महाप्रसाद जननी सर्व सौभाग्य वर्धिनी।
आधिव्याधि हरिर्नित्यं तुलेसित्व नमोस्तुते।।

सिर्फ जीवन की नहीं, बल्कि अंत काल में भी तुलसी काम आती है, सनातन धर्म में व्यक्ति के मरने से पूर्व उसके मुख में तुलसी जल डालने की प्रथा है।

मृत्यु के समय तुलसी के पत्तों का महत्व

मृत्यु के समय व्यक्ति के गले में कफ जमा हो जाने के कारण श्वसन क्रिया एवम बोलने में रुकावट आ जाती है। तुलसी के पत्तों के रस में कफ फाड़ने का विशेष गुण होता है इसलिए शैया पर लेटे व्यक्ति को यदि तुलसी के पत्तों का एक चम्मच रस पिला दिया जाये, तो व्यक्ति के मुख से आवाज निकल सकती है।

तुलसी की महिमा बताते हुए भगवान शिव नारदजी से कहते हैं - **'तुलसी का पत्ता, फूल, फल, मूल, शाखा, छाल, तना और मिट्टी आदि सभी पवित्र हैं।'** ऐसा माना जाता है कि जिन घरों में तुलसी का पौधा लगाया जाता है, वहाँ सुख-शांति और समृद्धि आती है, आस-पास का वातावरण पवित्र होता है, मन में पवित्रता आती है।

तुलसी के प्रकार

तुलसी हर रूप में कल्याणकारी है, यह 'राम तुलसी', 'श्याम तुलसी', 'श्वेत तुलसी', 'वन तुलसी' व 'नींबू तुलसी' आदि के नाम से पाई जाती है।

आयुर्वेद में तुलसी का महत्व

तुलसी को वेद में महौषधि बताया गया है, जिससे सभी रोगों का नाश होता है, यह एक बेहतरीन एंटी-ऑक्सीडेंट, एंटी-एजिंग, एंटी-बैक्टेरियल, एंटी-सेप्टिक व एंटी-वायरल है, इसे फ्लू, बुखार, जुकाम, खांसी, मलेरिया, जोड़ों का दर्द, ब्लड प्रेशर, सिरदर्द, पायरिया, हाइपरटेंशन आदि रोगों में लाभकारी बताया गया है। माना जाता है कि जिन घरों में तुलसी का पौधा होता है, वहाँ कोई भी वास्तुदोष नहीं होता है, इससे वातावरण और पर्यावरण की रक्षा तो होती ही है।

तुलसी - (ऑसीमम सैक्टम) एक द्विबीजपत्री तथा शाकीय, औषधीय पौधा है। तुलसी का पौधा हिंदू धर्म में पवित्र माना जाता है और लोग इसे अपने घर के आँगन या

दरवाजे पर या बाग में लगाते हैं। भारतीय संस्कृति के चिर पुरातन ग्रंथ वेदों में भी तुलसी के गुणों एवं उसकी उपयोगिता का वर्णन मिलता है। इसके अतिरिक्त ऐलोपैथी, होमियोपैथी और यूनानी दवाओं में भी तुलसी का किसी न किसी रूप में उपयोग किया जाता है।

ज्योतिषियों का कहना है कि तुलसी का पौधा घर में बहुत शुभ होता है। तुलसी को भगवान कृष्ण के भोग में रखना भी जरूरी बताया जाता है। कहा जाता है कि यदि संभव हो तो आंगन में अथवा घर में तुलसी का पौधा लगाएँ और रोजाना उसके नीचे दीपक जलाएं, तो सुख-समृद्धि आती है। वहीं, तुलसी का पौधा यदि कार्तिक माह में लगाया जाए, तो इसका विशेष महत्व माना जाता है। तो आइये आपको बताते हैं इस पौधे के बारे में जरूरी बातें।

उत्तर-पूर्व दिशा में लगाना बेहतर

माना जाता है कि तुलसी का पौधा घर में उत्तर दिशा, पूर्व दिशा या फिर उत्तर-पूर्व दिशा में लगाना चाहिए। दक्षिण दिशा में तुलसी का पौधा कभी नहीं लगाना चाहिए। तुलसी का सूखा पौधा कभी भी घर में नहीं रखना चाहिए। साथ ही सूखे पौधे को कहीं भी इधर-उधर नहीं फेंकना चाहिए, बल्कि इसे किसी कुएं में या किसी पवित्र स्थान पर चढ़ा देना चाहिए। इसकी जगह नया पौधा लगाना चाहिए। अगर पौधे की कुछ पत्तियां ही खराब हैं, तो उन्हें पौधे से निकालकर अलग कर दें।

पत्तों में रोग प्रतिरोधक क्षमता

तुलसी के पत्तों में रोग प्रतिरोधक क्षमता होती है। इन पत्तों का सेवन करने से हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी मजबूत होती है। नियमित रूप से तुलसी का सेवन करने से सर्दी-जुकाम और फ्लू जैसी बीमारियाँ ठीक हो जाती हैं। तुलसी के पौधे पर हुए एक रिसर्च के मुताबिक, तुलसी के पत्तों में कैंसर जैसी गंभीर बीमरी को भी दूर करने के गुण हैं। कहा जाता है कि तुलसी के पत्तों और बीज का सेवन करने से नपुंसकता भी खत्म हो जाती है।

सुबह के समय ही तोड़ें पत्ते

ऐसी मान्यता है कि तुलसी के पत्ते सुबह के समय ही तोड़ने चाहिए। किसी दूसरे समय पर इसके पत्ते तोड़ना अच्छा नहीं माना जाता। इतना ही नहीं, कहा जाता है कि तुलसी के पत्ते कभी बासी नहीं होते, तोड़ने के कई दिनों बाद भी इन पत्तों को पूजा में शामिल किया जा सकता है। इन्हें बार-बार धोकर भी देवताओं को चढ़ा सकते हैं। ऐसा कहा जाता है कि रविवार के दिन तुलसी को जल चढ़ा सकते हैं, लेकिन उसके नीचे दीपक नहीं जलाना चाहिए। यह भी माना जाता है कि भगवान गणेश और माँ दुर्गा को तुलसी का पत्ता नहीं चढ़ाना चाहिए। इसके अलावा यह ध्यान रखें कि जहाँ भी तुलसी का पौधा लगाया गया है, वहाँ कभी गंदगी न करें।

तुलसी का पौधा

तुलसी का पौधा क्षुप (झाड़ी) के रूप में उगता है और १ से ३ फुट ऊँचा होता है। इसकी पत्तियाँ बैंगनी आभा वाली हल्के रोएँ से ढकी होती हैं। पत्तियाँ १ से २ इंच लम्बी सुगंधित और अंडाकार या आयताकार होती हैं। पुष्प मंजरी अति कोमल एवं ८ इंच लम्बी और बहुरंगी छटाओं वाली होती है, जिस पर बैंगनी और गुलाबी आभा वाले बहुत छोटे हृदयाकार पुष्प चक्रों में लगते हैं। बीज चपटे पीतवर्ण के छोटे काले चिह्नों से युक्त अंडाकार होते हैं। नए पौधे मुख्य रूप से वर्षा ऋतु में उगते है और शीतकाल में फूलते हैं। पौधा सामान्य रूप से दो-तीन वर्षों तक हरा बना रहता है। इसके बाद इसकी वृद्धावस्था आ जाती है। पत्ते कम और छोटे हो जाते हैं और शाखाएँ सूखी दिखाई देती हैं। इस समय उसे हटाकर नया पौधा लगाने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

तुलसी माला

तुलसी माला १०८ गुरियों की होती है। एक गुरिया अतिरिक्त माला के जोड़ पर होती है इसे गुरु के गुरिया कहते हैं। तुलसी माला धारण करने से हृदय को शांति मिलती है।

जय श्रीमन्नारायण

सनातन धर्म में ज्ञान 'ब्रह्म' का स्वरूप है। अर्थात् ज्ञान ही ब्रह्म, ब्रह्म ही ज्ञान है। जन्मित हर एक मानव में पहले 'ज्ञान का बीज' बोने वाले गुरु माता-पिता ही है। कालक्रम में गुरु के पास विद्यार्जन करते हैं। उत्तम गुरु अपने ज्ञान और विद्या को उत्तम व्यक्ति या शिष्य को देने के लिए सोचता है।

हमारे सनातन धर्मों का प्रमाण वेद ही है। उसके द्वारा विराजित पुराण, इतिहास, सारे आगमों को इस लोक को देकर महोपकार किये गये वेदव्यास भगवान केवल भारतीय लोगों का ही नहीं सारे जगत के गुरु कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

अपने अपार रचनाओं के द्वारा धर्मनिरति का प्रबोध किये गये पुण्यमूर्ति है। कई अंशों में अपनी रचनाओं को सुदृढ करके मानव जीवन की समग्रता बीज बोए हुए महानुभाव वेदव्यास है। व्यास को एक व्यक्ति के रूप में ही नहीं परंपरागत विज्ञानसंपदा मूर्तीभूत रूप ही व्यास भगवान है। वेदविद्या की व्याप्ति के लिए साक्षात् विष्णु भगवान ही व्यास के रूप में जन्में थे। इसीलिए व्यास को विष्णु के अवतार के रूप में मानते हैं और आराधना करते हैं।

गुरु वेदव्यास

- श्री पी.श्रीनिवासुलु

मोबाइल - ९४९०३०६७६९

व्यास भगवान के बारे में महाभारत ग्रंथ में वैशंपायन (व्यास का शिष्य) द्वारा बताये गये विषय निम्न प्रकार है -

सृष्टि के आरंभ में ब्रह्मदेव के चुतर्मुखों के द्वारा नारायण ने वेद विद्या को प्रसारित किया है। उसे लोकों में व्याप्ति करने के लिए विष्णु भगवान ने ही अपने अंश से अपने तेजस्विनि का आविर्भूत करवाया है। उसका नाम 'अपांतरात्मा' है - जो 'अंदर के अंधकार' (अज्ञान) को दूर करनेवाला।

विष्णु का आत्मज - के रूप में व्याप्ति पाये इस घन ही विविधकालों में कई नामों से अवतार कर लोक में वेदधर्म का प्रतिष्ठित करता है।

व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे।
नमोवै ब्रह्मनिधये वाशिष्ठाय नमोनमः।।

जैसे व्यास का वेदनिधि विष्णु के रूप में आराधना करते हैं। अपांतरात्मा ही इस वैवस्वतमन्वंतर में पराशर के पुत्र के रूप में जन्म लिए है। पराशर के पिता शक्ति है। उनके पिता वशिष्ठ है।

इस परंपरा के बारे में बताते हुए कीर्तित करते हैं -

व्यासं वशिष्ठ नप्तारं शक्तेः पौत्र मकल्मषम्।
पराशरात्मजं वंदे शुकतातं तपोनिधिम्।।

'वशिष्ठ का प्रपौत्र, शक्ति का पौत्र, पराशर के पुत्र, शुक के पिता - उस तपोनिधि व्यास का वंदना करता हूँ।'

महाभारत के द्वारा विदित होता है कि -

महाभारतवंश का मूलपुरुष भी व्यास भगवान ही है। अपने दिव्य शक्ति से हमेशा वैकुंठ जाकर नारायण की आराधना करनेवाला भी इसी व्यास भगवान ही है।

वेदव्यास का वास्तव नाम **श्रीकृष्ण** है। सत्यवती पराशर को द्वीप में उद्भव होने के कारण **द्वैपायन** नाम पडा है। वेदों को लिखने के कारण वेदव्यास हुआ है। समस्त धर्मों एवं साहित्यों का मूल भी व्यास ही है।

व्यास को श्रीमहाविष्णु का अवतार और ब्रह्मज्ञानि के रूप में बताये गये हैं। हिंदू मत और संस्कृति केलिए विशेष कृषि किया था। चार मुख नहीं होने पर भी ब्रह्मदेव के रूप में, चार भुजाएँ नहीं होने पर भी महाविष्णु के रूप में और फालनेत्र नहीं होने पर भी महाशिव के रूप में बताये गये हैं। अर्थात् इसको त्रिमूर्त्यात्मक रूप में मान सकते हैं। व्यास **कृष्ण द्वैपायन** और **बादरायण** नाम से भी जाने जाते हैं। इन्होंने वेदों को अपने-अपने शाखाओं में सक्रम पद्धति में रखा है। इसलिए इनका नाम वेदव्यास के रूप में सार्थक हुआ है।

साक्षात् श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता के विभूति योग में सभी मुनियों में महर्षि 'व्यास' को सर्वश्रेष्ठ बताये थे। इसीलिए महर्षि व्यास इतना महिमान्वित हुए हैं। 'व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वं' व्यास का उच्छिष्ट (जूठा) ही इस जगत का समस्त वाङ्मय है। सारे दुनिया के ज्ञान ज्योति ही महर्षि 'व्यास' है।

व्यास त्रिकालवेदि है। वे सकल देवताओं के तथा मानवों के आराध्य है। कलियुग मानव शक्तिहीन, मंदप्रज्ञ, अल्पायुष्मतं हैं इसलिए सबको लाभान्वित करने के लिए वेदराशि (एक ही वेद) को ऋक्, यजु, साम, अथर्वण जैसे चार वेदों के रूप में विभक्त करके पैल, वैशंपायन, जैमिनि, सुमंत नामक शिष्यों के द्वारा लोक में प्रचार करवाये, सूत नामक शिष्य के द्वारा पुराण, इतिहासों का प्रचार करवाया है। इसीलिए कहते हैं कि ''व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वं'' अर्थात् व्यास के द्वारा अस्पृशित वाङ्मय इस जगत् में ही नहीं है। इन्होंने केवल सत्य का

उच्छारण करने के लिए, धर्म का आचरण करने के लिए, वेद विज्ञान की अभिवृद्धि करने के लिए इतिहास, पुराणों को ही पठन करने का निर्देश किया हैं। लक्षश्लोकों का महाभारत - सर्वशास्त्र, सर्वधर्म समन्वय ग्रंथ है। इस ग्रंथ के द्वारा जगद्गुरु के द्वारा प्रसारित विज्ञान अपार है। भगवद्गीता, यक्षप्रश्न, विष्णुसहस्रनाम, शिवसहस्र, कई उपाख्यान ऐसे विस्तार विषयों के साथ अद्भुतसाहित्य सृष्टि महाभारत है।

नारदमहर्षि की प्रेरणा से भागवत को भी इन्होंने ही दिया है। भारतीय धर्म में शाक्तेय, वैष्णव, शैव, सौर, गाणपत्य, कौमार कोई भी किसी भी उपासना संप्रदाय से संबंधित वाले व्यास भगवान को गुरु के रूप में स्वीकारते हैं।

आषाढ से लेकर कार्तिक मास तक आनेवाले पाँच पूर्णिमाओं को 'व्यासपूर्णिमाएँ' कहते हैं। वेदव्यास का स्मरण करते हुए आषाढ पूर्णिमा को 'गुरुपूर्णिमा' के रूप में व्यवहार करते हैं। धर्ममार्ग, मोक्षमार्ग, ज्योतिष, आयुर्वेदादि विद्याओं का भी आचार्य वेदव्यास ही है। इनके द्वारा बताये गए विद्याओं का अनुसरण करके बोधना करनेवाले ही सही गुरु हैं। इसीलिए व्यासपूर्णिमा के दिन ही 'गुरुपूर्णिमा' के रूप में सब अपने-अपने गुरुओं में वेदव्यास को संभावित करके समर्चना करते हैं।

उत्तम लक्षणों से युक्त गुरु सूर्यभगवान के समान है। आकाश में रहते हुए, लोकों को रोशनी देकर प्रत्यक्ष देवता के रूप में प्रार्थनाओं को स्वीकार करनेवाला भगवान सूर्य भागवान ही है। ऐसे ही समाज में महोन्नत गुरुपीठ को अधिष्ठित करके, निस्वार्थ रूप से ज्ञानदान करते हुए मानव जीवन को रोशिनी देनेवाला व्यक्ति ही गुरु है। इस तेजोमूर्ति के सामने सबको सिर झुकाना ही पडेगा।

'व्यासो नारायणो हरिः' इसीलिए आषाढ पूर्णिमा को 'गुरु पूर्णिमा' के रूप में निर्णय करके, व्यास के जन्मजयंति को भक्ति श्रद्धाओं से निर्वहण करके उनकी सेवाओं के कृतज्ञता के रूप में उसके माहात्म्य को एक बार इस पूर्णिमा के दिन मनन करके धन्य, कृतार्थ होना है।

मंत्रे तीर्थे च देवे च दैवज्ञे भैषजे गुरौ।
यादृशी भावना यत्र सिद्धिर्भवति तादृशी।।

वेदव्यास की स्तुति

जयति पराशरसूतः
सत्यवती हृदयनंदनो व्यासः।
योनास्य कमल गलितं,
वाङ्मय ममृतं जगत्पिवति।।

अर्थ पंचक

- श्रीमती शिल्पा केशव रांदड़
मोबाइल - ९१००१२६७७३

श्रीवैष्णव को 'अर्थ पंचक', 'रहस्य-त्रय' एवं 'तत्त्व-त्रय' का ज्ञान रहना आवश्यक है। 'अर्थ पंचक' के ज्ञान एवं तदनुसार आचरण के बिना श्रीवैष्णवता परिपक्व नहीं होती, यह आचार्यों का मत है।

प्रातःस्मरणीय **स्वामीजी श्री श्री वैकुण्ठाचार्य जी महाराज** द्वारा संक्षिप्त एवं सरल भाषा में सामान्य जीव को भी समझ में आ जाय इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर 'अर्थ पंचक' ग्रन्थ की रचना हुई, जिसके पठन-मनन एवं आचरण से अनेकों जीवों का कल्याण हुआ है।

इस ग्रन्थ का पठन मनन करने से जीवों को 'स्वरूप ज्ञान' हो जाता है, तदनन्तर भगवदनुभव, साक्षात दर्शन, हिलन-मिलन, वार्तालाप आदि से परमानन्द का दिव्यता आने लगता है। यही इस ग्रन्थ की मुख्य देन है जो सरलता एवं सुगमता से हृदयंगम हो जाती है।

अर्थ पंचक

१. **स्वस्वरूप**-मैं कौन हूँ?

२. **परस्वरूप**-परमात्मा कौन हैं?

३. **पुरुषार्थ स्वरूप**-भगवान को प्राप्त करने का उपाय क्या है?

४. **उपाय स्वरूप**-मुझे क्या करना चाहिए?

५. **विरोधी स्वरूप**-क्या/कौन भगवान की प्राप्ति नहीं होने देता?

१) मेरा कैसा स्वरूप है? **(स्वस्वरूप)**

२) मुझको संसार से छुड़ानेवाले परमात्मा का कैसा स्वरूप है? **(परस्वरूप)**

३) मुझको किस चीज को चाहना है? **(पुरुषार्थ स्वरूप)**

४) इस संसार से छूट जाने का क्या उपाय है? **(उपाय स्वरूप)**

५) मुझे इस संसार से कौन नहीं छूटने देता? **(विरोधी स्वरूप)**

इन पांच विषयों को जान लेना ही 'अर्थ पंचक' ज्ञान कहलाता है।

इन पांच विषयों में एक-एक विषय पांच प्रकार के होते हैं। वे इस प्रकार से हैं -

१) **स्वस्वरूप** (जीवात्मा)
१.नित्य, २.मुक्त, ३.बद्ध, ४.केवल, ५.मुमुक्षु

२) **परस्वरूप** (परमात्मा)
१.पर, २.व्यूह, ३.विभव, ४.अन्तर्यामी, ५.अर्चावतार

३) **पुरुषार्थ** (प्राप्तिलाभ फल)
१.धर्म, २.अर्थ, ३.काम, ४.केवल (आत्मानुभव), ५.भगवद अनुभव

४) **उपाय** (उपाय मार्ग साधन)
१.कर्म, २.ज्ञान, ३.भक्ति, ४.प्रपत्ति, ५.आचार्याभिमान

५) **विरोधी** (विरोधी ज्ञान विज्ञान)
१.स्वस्वरूप विरोधी, २.परत्त्व विरोधी, ३.पुरुषार्थ विरोधी, ४.उपाय विरोधी, ५.प्राप्ति विरोधी

I) स्वस्वरूप (जीवात्मा)

१) **नित्य -** नित्य जीव वे हैं जिन्हें **भगवत्कृपा** से सृष्टि पालन-नाश पर्यन्त कैंकर्य करने का अधिकार प्राप्त है, जो नित्य निरन्तर **भगवत कैंकर्य** में ही लगे हुए हैं, जो संसार के जन्म-मरणादि दुःखों से रहित होते हुए निरन्तर श्री भगवान की सन्निधि प्राप्तकर श्री भगवान के अनुकूल रहते हुए प्रभु के श्री दिव्य विग्रह के अनुभव द्वारा सर्वानन्द परिपूर्ण हैं, **श्री शेष, गरुड़, विष्वक्सेन** आदि नाम से शास्त्रों में प्रसिद्ध हैं।

२) **मुक्त -** मुक्त संज्ञा उन जीवों की हैं जो **श्री आचार्य तथा श्री भगवान** के अनुग्रह से इस प्राकृत शरीर को सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा छोड़ दिव्य विमान पर बैठ भगवत पार्षदों सहित अर्चिरादि मार्ग से सूर्य, चन्द्र, विद्युत, वरुण, इन्द्र, ब्रह्मादिक देवों से पूजित हो, देव लोकों को पारकर, प्रकृति मण्डल को भेद, श्री बिरजा स्नान द्वारा वासना के साथ सूक्ष्म शरीर को छोड़, (प्राकृत शरीर छूटने के पश्चात जो शरीर प्राप्त हुआ था, बिरजा स्नान के पूर्व उस सूक्ष्म शरीर के साथ प्रकृति की कुछ गन्ध रहती है सो स्नान के पश्चात सूक्ष्म शरीर के साथ नष्ट हो जाती है।) श्री प्रभु के संकल्प से नित्य पार्षदों के जैसा दिव्य विग्रह प्राप्तकर, नित्यों की पंक्ति में सम्मिलित हो, नित्यों के साथ सहस्र स्तम्भों से युक्त महामणि मण्डप में दिव्य **सिंहासनारूढ़ श्रीवैकुण्ठ विहारी** का दिव्य दर्शन कर, नित्य कैंकर्य का अधिकार प्राप्तकर, जन्म-मरण से छुटकारा पाय **अनुभवानन्द** में परिपूर्ण हो जाते हैं। जैसे **श्रीजटायूजी, श्रीशबरीजी** आदि।

३) **बद्ध -** बद्ध वे हैं जो विपरीत ज्ञान उत्पन्न करने वाला सुख तथा दुःख का कारण रस, रक्त, माँस, मोदा, मज्जा, अस्थि, शुक्र इस सप्त धातुओं से बने हुए **महा अशुद्ध अनित्य** देह को प्राप्त कर **देह ही आत्मा है** यह जान इसकी अनुकूलता के लिए श्री जगदीश चरणों से विमुख होय स्ववर्णाश्रम से विरुद्ध **शास्त्र विपरीत कर्मों** को करते हुए भूख, प्यास, शोक, जरा, मृत्यु इनसे ग्रसित हो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य से मोहित हो संसार के अनन्त दुःखों से दुःखित होकर भी संसार में अनन्त काल से पड़े हुये आगे भी संसार में ही पड़ने के लिए उपाय करते हुए भ्रम में पड़ अपने **अमुल्य** समय को व्यतीत कर रहे हैं।

४) **केवल (आत्मानुभव) -** केवल वे हैं जो **परमात्मा के स्वरूप** का आनन्द न प्राप्तकर स्वात्मानुभव में ही

अपने को कृतकृत्य मानते हुए समय को बिता रहे हैं। आत्मानुभव के प्रताप से **कैवल्य मोक्ष** प्राप्त कर जहाँ आत्मानुभव का ही अधिकार प्राप्त होता है जन्म-मरण से रहित भी हो जाते हैं।

५) **मुमुक्षु** - मुमुक्षुजन वे हैं जो भगवत्कृपा से **आब्रह्मभुवनल्लोका पुनरावर्तिनोऽर्जुन** इस श्री गीतोक्ति के अनुकूल ये चौदह लोक तथा इनके सुख अनित्य हैं, यह २४ तत्त्व का बना हुआ शरीर दुःख रूप है, अचेतन है, अनित्य है, स्थूल है, विकार युक्त है तथा आत्मा नित्य है, चेतन है, अणु है, विकार रहित है, सुख स्वरूप है, भगवद्दास है, **श्री भगवान के ही शरण में जाने से इसका कल्याण है** यह जान संसार से वैराग्य प्राप्त कर श्री आचार्य चरणों के अनुग्रह से भगवद्भागवताचार्य कैंकर्य परायण होते हुए विशेष शास्त्र विहित कार्यों को श्री भगवान की आज्ञा से श्री प्रभु के प्रीत्यर्थ, श्री प्रभु का कैंकर्य, ऐसा जानते हुए अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक श्रीमन्नारायण का है यह विचार कर चराचर पर दया रखते, उनके कल्याण वास्ते श्री प्रभु से प्रार्थना करते, नित्य-निरन्तर श्री प्रभु के अनुभव में ही समय बिताते हैं। वे **मुमुक्षु** दो प्रकार के हैं।

१) आर्त और २) दृप्त

आर्त वे हैं जिन्हें श्री भगवच्चरणों का क्षणिक वियोग भी कल्प जैसा विदित होता है, तथा

दृप्त उनका नाम हैं जो श्री भगवत कैंकर्य करते हुए श्री प्रभु संकल्पानुकूल शरीर यात्रा समाप्त कर नित्य भगवत कैंकर्य प्राप्ति की आशा रखते हैं''।

❋❋❋

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, देव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेजिए-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

(गतांक से)

श्रीरंगम रंगनाथस्वामी मंदिर

- डॉ.एच.एन.गौरी राव
९७४२५८२०००

साहित्यिक परंपरा :

श्रीरंगम के बारे में वर्णन करते समय तमिल साहित्य परंपरा के योगदान को कहे बिना, वर्णन असंपूर्ण रह जाता है। ६वीं और ७वीं सदी के भक्ति आंदोलन के सभी संतों के गीतों में श्रीरंगम के बारे में स्तुतियाँ और गीत मिलते हैं। भगवान विष्णु की सेवा में तल्लीन रहनेवाले भक्तों को आल्वार कहते हैं। उनकी रंगनाथ के प्रति भक्ति की कोई सीमा नहीं थी। भक्ति की पराकाष्ठा दिखाई पड़ाती है। भगवान से प्रार्थना करते हैं कि वे हमेशा श्रीरंगम में ही जन्मे, ताकि वे भगवान की सेवा कर सकें। आखिर वे श्रीरंगम की गली में एक कुत्ते के रूप में भी सही जन्म लेना चाहते हैं। इन्होंने ४००० पद्य (पाशुर) लिखे है। इन पद्यों का संग्रह 'दिव्यप्रबंध' कहलाता है। १२ आल्वार संतों में केवल आंड़ाल ही महिला थी, जिसने रंगनाथस्वामी को अपना पति मानकर अपनी रचनाओं से भगवान की सेवा की है। तोंडरडिप्पोडि आल्वार तथा तिरुप्पाणाल्वार रंगनाथस्वामी पर विशेष रूप से गाया है। मंदिर के निर्माण में जितना राजा-महाराजाओं का योगदान है, उतना ही मंदिर की भव्यता और भगवान रंगनाथ के वैभव को उजागर करने में तमिल संत कवियों का योगदान है। 'तिविय प्रबंधम' (प्राचीन तमिल साहित्य) में श्रीरंगम के बारे में विवरण मिलता है। विश्वास किया जाता है कि श्रीवैष्णवों के गुरु प्रार्थना (तनियन) ''श्रीशैलेश दयापात्रं'' श्लोक को रंगनाथ स्वामी ने स्वयं मणवाला महामुनी को समर्पित किया था।

१००० वर्ष पूर्व रामानुजाचार्यजी कांचीपुरम से श्रीरंगम पधारे। वैष्णव आचार्यों में प्रमुख रामानुजाचार्यजी ने विशिष्टाद्वैतवाद का प्रवर्तक तथा प्रचार किया है। उन्होंने ब्रह्म सूत्र पर अपनी प्रसिद्ध टीकाएँ लिखी। उन्होंने अपनी कृतियों से हिंदू धर्म को और समृद्ध बनाया। रामानुजाचार्यजी की शिष्य परम्परा में रामानन्द हुए जिनके शिष्य कबीर,

रैदास और सूरदास थे। इस मंदिर का दर्शन जगद्गुरु शंकराचार्यजी ने भी किया था। उन्होंने 'रंगनाथाष्टकम' की रचना की।

इस पवित्र मंदिर तथा दिव्य मूर्ति की स्तुति रंगनाथाष्टकम की गयी है :

''सप्तप्राकारमध्ये सरसिजमुकुलोद्भवसमाने विमाने,
कावेरीमध्यदेशे फणिपतिशयने शेशपर्यंकभागे,
निद्रामुद्राभिरामं कटिनिकटशिरः पार्श्वविन्यस्तहस्तम्,
पद्मधात्रीकराभ्याम परचितचरणम् रंगराजम् भजेहम्।''

पूजा विधि :

रंगनाथ मंदिर में पूजा करने की तेंगलाई पद्धति का पालन किया जाता है। भगवद् रामानुजाचार्यजी ने जिन पूजा पद्धतियों को, उत्सवों को, रीति-रिवाजों को क्रियान्वित किया था, आज भी उनको ही पालन किया जाता है। यहाँ की विशेषता है कि सुबह छः बजे एक हाथी, जिस पर भगवान के अभिषेक के लिए कावेरी नदी से पानी लाया जाता है, कपिल (काला) गाय और घोड़ा (हरि) को मंगलवाद्यों के साथ भगवान के मंदिर के सामने लाने के बाद ही द्वार खोले जाते हैं। ताकि भगवान सबसे पहले इन मंगलकर जंतुओं को देखे। इसके बाद आईने में अपने आपको देखने के लिए भगवान के सामने रखते हैं। नित्य भगवान को अभिषेक, पूजा, आरती और नैवेद्य आदि किए जाते हैं। प्रभात दर्शन 'विश्वरूप दर्शन' कहा जाता है। आरती के समय भगवान का रूप अत्यंत सुंदर दिखाई पड़ता है। पूजा के अलावा साल में बहुत दिन भगवान का कोई न कोई उत्सव मनाया जाता हैं। उत्सवों के समय में मंदिर में भगवान की विशेष पूजा तथा अलंकार किये जाते है।

उत्सव :

श्रीरंगम में जितने उत्सव मनाए जाते हैं, उतना अन्य किसी मंदिर में नहीं मनाये जाते है। ३६५ दिनों में ३२२ दिन उत्सव मनाते हैं। हर उत्सव बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता हैं। इससे यह क्षेत्र 'भोग मंडप'' भी कहा जाता है। भगवान आभूषणों से अलंकृत होकर तेजोमय, चित्ताकर्षक दिखाई पडते हैं। स्थानीय लोग बड़े उत्साह से इन उत्सवों में भाग लेते हैं। श्रीरंगम में मनाये जानेवाले प्रमुख उत्सव निम्नलिखित है-

१.वैकुंठ एकादशी :

तमिल मार्गशिर माह में पहले १० दिन पागल-पथु उत्सव को मनाया जाता है और अगले १० दिनों तक रा-पथु नाम का उत्सव मनाया जाता है। रा-पथु के पहले दिन एकादशी मनायी जाती है। परंतु वैकुंठ एकादशी बहुत ही पवित्र माना जाता है। इस अवसर पर मन्दिर का वैकुण्ठ द्वार खुलता है तथा भगवान की उत्सव मूर्ति नम्पेरुमाल इस द्वार से होते हुये सहस्त्र मण्डप में आते है। लोगों का विश्वास है कि इस दिन वैकुंठ द्वार से निकलने पर मोक्ष को प्राप्त होता हैं। इस दिन लाखों लोग इकट्ठे होते हैं।

२.रंगजयंती उत्सव :

८ दिन तक धूमधाम से मनाए जाने वाले रंगजयंती उत्सव हर साल की शुक्ल पक्ष की सप्तमी को संपन्न होता है। कृष्ण दशमी में स्नान करने से ८ तीर्थों के नहाने के पुण्य के समान है। रंगनाथ स्वामी के जन्म दिवस को आठ दिन मनाते है।

३.ब्रह्मोत्सव :

श्री रंगनाथ स्वामी को हर साल ४ ब्रह्मोत्सव मनाए जाते हैं। मकर मास में 'पुनर्वसु' ब्रह्मोत्सव संपन्न होता है जो चक्रवर्ती तिरुमगन से आयोजित किया गया था। इसको 'भूपति तिरुनाल' कहते हैं। कुंभ मास में 'शुद्ध एकादशी' ब्रह्मोत्सव का आचरण हैं। यह स्वामी एंबेरुमानार से आयोजित किया गया था। मीन मास में 'उत्तरा नक्षत्र' ब्रह्मोत्सव है। स्वयं चतुर्मुख ब्रह्म से आयोजित होने से यह 'ब्रह्मोत्सव' कहलाता हैं। मेष मास में 'रेवती' ब्रह्मोत्सव है, यह 'विरुप्पन तिरुनाल' कहा जाता हैं।

ब्रह्मोत्सव में भाग लेने के लिए अनेक वैष्णव भक्त श्रीरंगम आते हैं। उत्सव के पूर्व अंकुरार्पण, रक्षाबंधन, भेरीताड़नम्, ध्वजारोहण आदि संपन्न होते हैं। शाम को चित्रै रास्ते पर जुलूस होकर परिक्रमा करते हैं। दूसरे दिन भगवान को मंदिर के उद्यान में ले जाते हैं। तीसरे दिन भगवान को कावेरी नदी से होकर सामनेवाले तीर पर जियापुरम ले जाते हैं। छठवें दिन रंगनाथस्वामी कमलवल्ली से मिलने के लिए वोरयूरु नामक स्थान को पल्लकी में जाते हैं। पूरे १ दिन तक वहाँ रहकर भक्तों को दर्शन भाग्य देते हैं और अपने अंगुठे को कमलवल्ली को देकर रात को वापस आते हैं। इस बात से रंगनायकी रूठ जाती हैं। रंगनाथस्वामी रंगनायकी को अंगूठा देने के लिए भक्तों से धन की सहायता मांगते हैं। नम्माल्वार के कहने पर रंगनायकी रंगनाथस्वामी से रहने के लिए मान जाती है। तब सेतु मंडपम पर 'तिरुमंजन' सेवा का आचरण किया जाता है। इसको 'सेतु उत्सव' कहते हैं। तब १९ तरह के वस्त्रों से अलंकृत करते हैं। साल में केवल इसी एक दिन को रंगनाथ स्वामी रंगनायकी से मिलकर दर्शन देते हैं। इस दिन भगवान प्रसन्न रहते है। और सबकी इच्छाओं को पूर्ण करते है। इस अवसर पर 'शरणागति गद्य' को रामानुजाचार्यजी ने सेतु मंडपम में लिखा था।

४.पवित्रोत्सव :

मंदिर में भगवान को किये जाने वाले नित्य पूजा में होने वाले लोप दोषों से निवारणार्थ पवित्रोत्सव मनाया जाता है। यह उत्सव तमिल के आनी नामक मास में अर्थात अगस्त/ सितंबर में मनाया जाता हैं। यह उत्सव २ दिन मनाया जाता हैं। पहले दिन उत्सव मूर्ति को यज्ञशाला में ३६५ बार तिरुवर्धनम करते हैं।

दूसरे दिन गर्भगृह की देवता मूर्तियों का १००८ बार तिरुवर्धनम करते हैं। इस उत्सव के समय भक्त सूत से बनी पवित्र धागे की माला को भगवान को समर्पित करते हैं।

४.ज्येष्ठाभिषेक :

वर्ष में एक बार तमिल आनी मास में मूर्तियों को सफाई करने के लिए और नम्पेरुमाल और आंड़ाल देवेरी के आभूषणों को चमकदार करने के लिए जो

उत्सव मनाते हैं, वह 'जेष्ठाभिषेक' कहा जाता है। गर्भगृह को स्वच्छ करके, मंदिर में ही तैयार किये गये जड़ी-बूटियों के तैल से पेरिय पेरुमाल को लेपित किया जाता हैं। इस कार्य के लिए सोना और चांदि के भगौनों में कावेरी नदी के पवित्र पानी को हाथीयों पर रखकर अर्चक और भक्तगण मंत्रोच्चारण करते हुए मंदिर को ले आते हैं। सब प्रतिमाओं को तिरुवेन्नायलि प्राकार में रखते हैं। वहाँ छोटेजीयरस्वामी तथा वधुलदेशिकार स्वामी के समक्ष आभूषणों की सफाई की जाती हैं। प्रतिमाओं को पवित्र जल में डुबोया जाता है। भक्तादि की पूजा के बाद शाम को फिर से आभूषणों से अलंकृत किया जाता है।

रथोत्सव :

तमिल थाई मास (जनवरी-फरवरी) में मनाए जानेवाले रथोत्सव में मंदिर के मुख्य देवता को रथ पर बिठा के मंदिर के चारों ओर परिक्रमा किया जाता है।

चैत्र पूर्णिमा :

मगरमच्छ और हाथी की कथा में रंगनाथस्वामी हाथी की सहायता की थी उसको लेकर 'चित्र पूर्णिमा' उत्सव मनाते हैं।

वसंतोत्सव :

वसंतोत्सव को तमिल वैकासी (मई-जून) में किया जाता है।

नवरात्रि :

नवरात्रि के दिन सभी आभूषणों से अलंकृत होकर रंगनायकी माता स्वर्ण मंडप में विराजमान होती है। केवल नवरात्रि के समय माता स्वर्ण मंडप में आती है। माता का सौंदर्य तब अलौकिक दिखाई पड़ती है। उत्सव के समय 'आंडाल' नामक हाथी, एक वाद्य (माउथ ऑर्गन) को स्वयं बजाती है, चामर की सेवा करती है।

नवरात्रि के अलावा और अनेक त्योहार मंदिर में आचरण किए जाते हैं।

श्रीरंगम मंदिर में हर प्रत्येक दिन भक्तों को मुफ्त में भोजन कराने की रिवाज है।

अनेक पौराणिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक और दार्शनिक विशेषताओं को अपने में समाया हुआ यह मंदिर, श्रीरंगम वासियों के लिए केवल मंदिर नहीं है, उनकी आत्मा है। श्रद्धालु, श्रीरंगनाथ में ऐसे तल्लीन हो जाते हैं कि उनके लिए रंगनाथ के बिना सब कुछ नश्वर है। हमेशा भगवान के साथ रहने की इच्छा रखते हैं। इनके लिए यह मंदिर भूलोक वैकुंठ है। वैकुंठ की वैभवता श्रीरंगम में दिखाई पड़ती है। हम कह सकते हैं कि अनेक विशेषताओं से भरे यह अद्भुत मंदिर सारे विश्व में 'न भूतो न भविष्यति' है। भगवान का महत्व अत्यंत प्रभावशाली है। विश्वास किया जाता है कि जो भी एक बार श्रीरंगम का दर्शन करता है या भगवान का नाम लेकर नतमस्तक होता है, उसका हर पाप मिट जाता हैं।

ब्रह्मादिवन्द्ये जगदेकवन्द्ये मुकुंदवन्द्ये सुरनाथवन्द्ये।
व्यासादिवन्द्ये सनकादिवन्द्ये श्रीरंगवन्द्ये रमतां मनो में।।

समाप्त

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(षष्टम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

१०९

श्रीमते रामानुजाय नमः

साधन स्वरूप भक्तियोग अधिकारी से और फल प्रपत्ति वाले अधिकारी से प्रायः बहुत से अंश में मिलान होता है। फल प्रपत्ति में प्रधान कर्ता और प्रधान भोक्ता श्री भगवान ही रहते हैं। क्योंकि साधन दशा में उस अधिकारी का भगवान ही उपाय रहते हैं याने भगवान की निर्हेतुक कृपा ही को वह साधन रूप से स्वीकार किया रहता है। इससे फल प्रपत्ति वाले अधिकारी में कर्तृत्वाभिमान नहीं माना जाता। इसका कारण फल दशा में भी इस अधिकारी का विशेष दर्जा रहता है। साधन प्रपत्ति वाला अधिकारी फल दशा में भगवान के दरबार में बहिरंग माना जाता है। क्योंकि उसके कर्त्तव्यों का प्रधान कर्ता उसने अपने को मान रखा है। और फल प्रपत्ति वाले जो अधिकारी हैं उनका प्रधान कर्ता-भोक्ता श्री भगवान ही रहते हैं। इसलिए परमपद में श्री भगवान के श्री दिव्य महल का वह अन्तरंग अधिकारी बनाया जाता है। श्रीजी, श्री लक्ष्मणजी, श्री वत्स, श्री कौस्तुभ आदि दिव्य पार्षदों के समान कोटि उसको वहाँ प्राप्त होती है। यह बीच में दो प्रकार की प्रपत्ति और दोनों पर परिस्थिति करने वाले अधिकारियों का साधन दशा में और फल दशा में जैसा कुछ भेद शास्त्रों में बताया है वैसा मैं विवेचन किया हूँ। अब फिर भी जो फल प्रपत्ति का प्रसंग कहना शुरू किया था उसको अच्छी तरह से आगे कहता हूँ।

दैवी ह्येषा गुणमयी मममाया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।

यह गीता शास्त्र का सारांश भगवान की श्रीमुख वाणी है इसके जरिये इस बात का निश्चय हो चुका कि दुरत्यय भगवान की माया से तरने के लिये एक भगवान की शरणागति के सिवा कोई दूसरा सरल उपाय नहीं है। और भगवान की शरणागति में जीव मात्र का अधिकार है। भगवान की शरणागति में देश कालादि का नियम नहीं है। परन्तु एक बात का सख्त नियम है। भगवान श्रीपति में की हुई शरणागति माया से पार करती है। भगवान के सिवा यदि दूसरे की शरणागति करें तो वह शरणागति सफल नहीं होती याने माया बन्धन से नहीं छुड़ा सकती है। अतः मुमुक्षुओं के लिए शास्त्रों की आज्ञा है कि माया से पार होने के लिये एक श्री लक्ष्मीकान्त की ही शरणागति का अवलम्ब लेवे। जैसे उपनिषदों में लिखा है :-

''यो वै ब्रह्माणं बिदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।
तंहि देव आत्म बुद्धि प्रसादं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये।''

इसका भाव यह भया कि जो परमात्मा श्रीनिवास आदि सृष्टि में प्रथम ब्रह्म को उत्पन्न किये और अब वेदों का ज्ञान कराये। मुमुक्षुओं को चाहिए कि माया से छूटकर परमपद जाने के लिए एक उन्हीं परमात्मा के शरण होवें। इस श्रुति वाक्य से सन्देह रहित निर्णय हुआ कि मुमुक्षुओं को माया बन्धन से छूटने के लिए एक श्रीहरि की ही शरणागति करनी चाहिए। वह भगवान कैसे हैं (आत्म बुद्धि प्रसादं) ''आत्म बुद्धैयव प्रसादो यस्य स आत्म बुद्धि प्रसादः तं आत्म बुद्धि प्रसादं अर्थात् निर्हेतुक कृपा करण शीलम्।'' भगवान अपनी निर्हेतुक

कृपा से ही आश्रितों पर प्रसन्न होते हैं अर्थात् शरणागतों से इतरावलम्ब नहीं चाहा करते हैं।

श्री देवराज गुरु कहते हैं हे महात्माओ! ''दैवी ह्येषा'' गीता के इस श्रीमुख वचन से तथा ''योवै ब्रह्माणं बिदधातिपूर्वं'' इत्यादि श्रुति वाक्य द्वारा पक्का निश्चय हो चुका कि माया से तरने के लिए भगवान श्रीमन्नारायण की शरणागति के सिवा और कोई भी सब के लायक सरल तथा अचूक उपाय नहीं है। ये भी निश्चय हो चुका कि भगवान श्रीपति के सिवा दूसरे की शरणागति करना मुमुक्षु महात्माओं के लिए सख्त मना है। माया से तरने की इच्छा करने वालों को दूसरे की शरणागति करने से कुछ लाभ नहीं हो सकता। ''मामेव'' इस श्रीमुख वाणी से यह भाव निकलता है कि शरण होने वाले अधिकारी को अकिश्चन और अनन्यगति अवश्य होकर रहना चाहिए।

ये दो आकार जिस अधिकारी में रहेंगे उसी अधिकारी से श्री भगवान में की हुई शरणागति काम दे सकेगी और

जिस अधिकारों में ये दो आकार नहीं होंगे शरणागति उस अधिकारी को माया से नहीं तार सकेगी। जो उपायान्तर को त्याग कर दिया है याने साधनस्वरूप कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग का बिल्कुल सहारा नहीं पकड़ा है उसको अकिश्चन अधिकारी कहते हैं और भगवान श्रीपति के सिवा जिसने स्वप्न में भी दूसरे को अपना रक्षक नहीं माना है उसको अनन्यगति कहते हैं।

इसका खुलासा अर्थ यह भया कि भगवान के शरणागत होने के पहले शरणागत होने वाले अधिकारी को चाहिए कि उपायान्तर और रक्षकान्तर को त्याग कर दे। शरणागति करने वाले अधिकारी के लिए और किसी बात की सख्ती नहीं रखी है परन्तु इस बात के लिए तो सख्त शर्त है कि उपायान्तर तथा रक्षकान्तर त्याग देने के बाद ही भगवान की शरणागति की जाती है और उसी अधिकारी की शरणागति भगवान के द्वारा शरणागति में मानी जाती है। जो उपायान्तर और रक्षकान्तर का अवलम्ब पकड़े रहते हैं और अपने को भगवान का शरणागत भी माना करते हैं उनका अपने को शरणागत मानना माया से तरने में कुछ भी सहायक नहीं बन सकता, क्योंकि उन्होंने शरणागति का क्रम छोड़ दिया है। इसीलिए भगवान अपने श्रीमुख वाणी से श्री गीताजी के चरम श्लोक में सब से पहिले शरणागत के लिए उपायान्तर त्याग की ही आज्ञा किये : जैसे कि :- **''सर्वधर्मान्परित्यज्य।''**

उपायान्तर का स्वरूप क्या है, उपायान्तर में कितनी कठिनाइयाँ है तथा भगवान श्रीपति के अतिरिक्त दूसरे देवतान्तरों को अपना रक्षक मानने में कितनी हानि है। जिन लोगों ने शास्त्रों के प्रशंसावाद के प्रमाणों के धोखे में आकर श्रीहरि को छोड़कर दूसरे देवों को अपना रक्षक माना है वे पीछे बहुत पछिताएँगें।

क्रमशः

(गतांक से)

श्री प्रपन्नामृतम्

(२३वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

परमपुरुषार्थ के साधनभूत रहस्यों की प्राप्ति

एक बार श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्रीरंगम् आकर श्रीमालाधर स्वामीजी को साथ लेकर भगवान श्रीरामानुजाचार्यजी के मठ में पधारे। उन्हें देखकर साष्टांग प्रणिपातपूर्वक श्रीरामानुजाचार्यजी स्वामीजी हाथ जोड़कर खड़े हो गये। श्रीरामानुजाचार्यजी को देखकर श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्रीमालाधर स्वामीजी को निर्देश करते हुए- ''रामानुज! तुम इनसे'' ''सहस्रगीति'' का व्याख्यान सुना करो।'' कहकर गोष्ठीपुर चले गये। इसके बाद नियमपूर्वक नित्यप्रति यतिश्रेष्ठ श्रीरामानुजाचार्यजी श्रीमालाधर स्वामीजी से सहस्रगीति का व्याख्यान सुनने लगे, एक बार श्रीमालाधर स्वामीजी ने सहस्रगीति के किसी गाथा का संप्रदाय विरुद्ध अर्थ किया। उसे सुनकर श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''भगवान! इस गाथा का यह अभिप्राय नहीं है।'' श्रीरामानुजाचार्य की वाणी सुनकर मालाधर स्वामीजी ने उसे अनुचित समझकर सहस्रगीति का उपदेश बन्द कर दिया। इस बात को सुनकर श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामी शीघ्र ही श्रीरंगम आकर श्रीमालाधर स्वामीजी को बताये कि श्रीरामानुजाचार्य को आप विद्या का संस्कार मात्र करा दीजिये। वे भगवान यामुनाचार्यजी के हार्दिक अभिप्राय को जानते हैं। ये सामान्य लोगों में नहीं हैं। श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामीजी की वाणी सुनकर श्रीमालाधर स्वामीजी पहले की ही भाँति श्री पूर्णाचार्य स्वामीजी

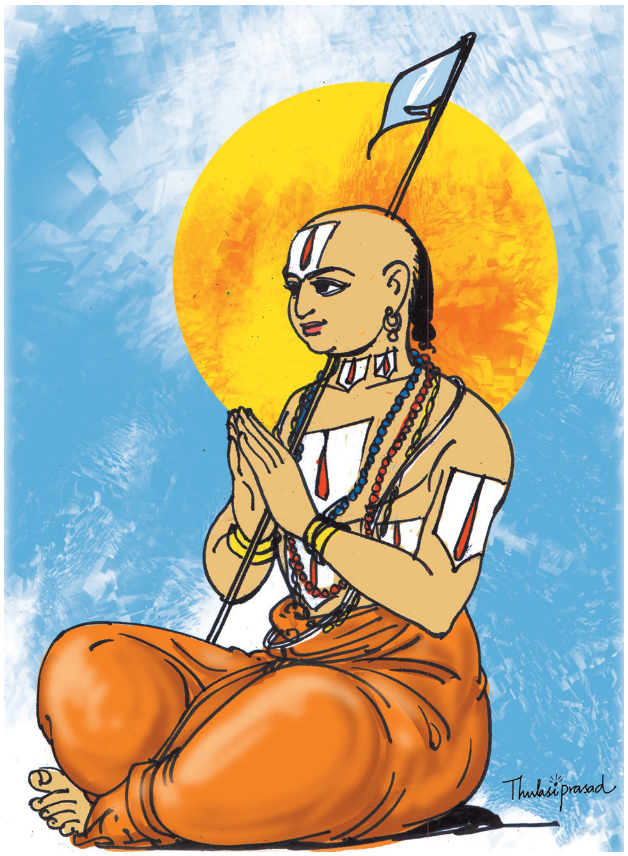

के साथ श्रीरामानुजाचार्यजी के मठ में जाकर सहस्रगीति ग्रन्थ का उपदेश करना प्रारम्भ कर दिये। इसके बाद फिर एक बार जब श्रीमालाधर स्वामीजी सहस्रगीति का व्याख्यान कर रहे थे तो श्रीरामानुजाचार्यजी बोले- ''आचार्य! इस सूक्ति का अर्थ करने में श्रीयामुनाचार्य को यह अभिप्राय नहीं था।'' इसे सुनकर श्रीमालाधर स्वामीजी पूछे कि आप तो श्रीयामुनाचार्य स्वामी को कभी देखे नहीं थे फिर भी आप उनके अभिप्रायों को कैसे जान लेते हैं। उत्तर देते हुए श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''जिस तरह एकलव्य आचार्यद्रोण के अव्यवहित शिष्य थे उसी तरह श्रीयामुनाचार्य का भी मैं अव्यवहित शिष्य हूँ।'' उनकी यह बात सुनकर श्रीमालाधर स्वामी उन्हें भगवान का अवतार मानकर अव्यवहितरूप से सहस्रगीति ग्रन्थ का रहस्य व्याख्यान सुना डाले और अपने पुत्र श्रीसुन्दरबाहु को उनका शिष्य बनवाकर बोले- ''श्रीवररंगाचार्य स्वामी के पास कुछ विशेष अर्थ हैं। अतः उनके पास जाकर आप उन विशेष अर्थों को सुन लें। श्रीमालाधर स्वामीजी की आज्ञा पाकर श्रीरामानुज स्वामी छः मास तक श्रीवररंगाचार्य स्वामीजी को रात्रि में दूध प्रतिदिन पहुँचाते रहे। धनुर्मासोत्सव के समय भी श्रीरंगनाथ भगवान के सामने नाट्यकर्म के बाद थके-मँदि श्रीवररंगाचार्य स्वामीजी को वे हल्दी, तेल का लेपन भी कर दिया करते थे।'' इस तरह श्रीरामानुजाचार्य स्वामी की सेवापरायण देखकर श्रीवररंगाचार्य स्वामीजी बोले कि- ''आपको मैं आज अन्तिम पुरुषार्थ का रहस्य बतलाता हूँ। इस रहस्य को श्रीशठकोप स्वामीजी को छोड़कर कोई नहीं जानता।'' ब्रह्मविद्या का उपदेश देने वाले आचार्य से बढ़कर कोई भी शिष्य के लिए महान् और श्रेष्ठ नहीं है। सद्गुरु ही सच्छिष्य के लिए प्राप्य हैं क्योंकि मोक्षप्राप्ति के साधनभूत ब्रह्मविद्या का उपदेशक होने से वे ही मोक्ष के साधन रूप हैं। किं बहुना? आचार्य स्वयं ही भगवान के स्वरूप हैं। इस तरह आचार्याभिमान् (आचार्यनिष्ठा) का सदुपदेश देकर श्रीवररंगाचार्य स्वामीजी अपने पुत्र श्रीशोटूनम्ब्यजी को यतीन्द्र श्रीरामानुज स्वामी से समाश्रित करा दिये। इस तरह श्रीरामानुज स्वामीजी श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के पाँच शिष्यों से सभी शास्त्रों का अध्ययन करके जगद्धितार्थ शिष्यों के साथ अपने मठ में सुखपूर्वक निवास करने लगे। मानव उन्हीं का सम्बन्ध प्राप्त करके इस जीवन के पश्चात् भगवान विष्णु के परंधाम वैकुण्ठलोक को प्राप्त करता है।

।। श्रीप्रपन्नामृत का २३वाँ अध्याय पूरा हुआ ।।

क्रमशः

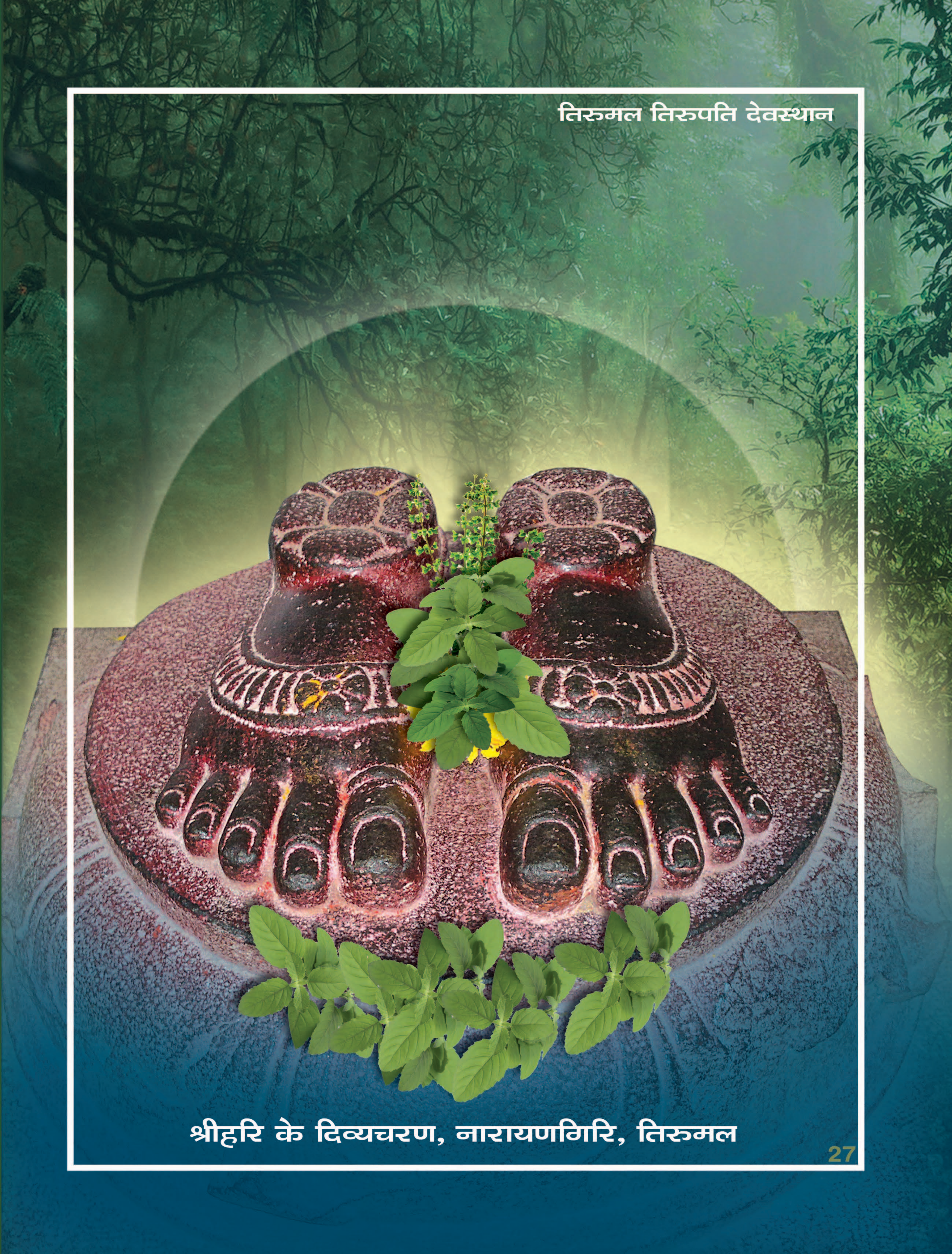

श्रीहरि के दिव्यचरण, नारायणगिरि, तिरुमल

तिरुचानूर स्थित श्री सुंदरराजस्वामीजी को संपन्न अवतारोत्सव के दृश्य।
२०२१, जून २१ से जुलाई ०१ तक

तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामीजी को संपन्न पत्रपुष्पयाग के दृश्य।
२०२१, मई २६

तिरुमल श्रीबालाजी के मंदिर में मनाये जाने वाले पवित्रोत्सव २०२१, आगस्त १७ से २० तक

२०२१, जून १३ वा तारीख को जम्मू प्रांत में वैभवोपेत ढंग से श्री बालाजी के मंदिर निर्माण केलिए कंक्रीटिंग कार्यक्रम के दृश्य। इस कार्यक्रम में भाग लेते हुए जम्मू-कश्मीर के लेफ्टिनेंट राज्यपाल श्री मनोज सिन्हा, मंत्रीगण मान्यवर श्री जी.किषण रेड्डी, श्री जितेंद्र सिंह, ति.ति.दे. अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी, ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., और अन्य अधिकारिगण।

जून २४, २०२१ तारीख को निर्दिष्ट प्राधिकरण अध्यक्ष पद के कार्यभार को स्वीकारते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., जी को इस संदर्भ में श्रीहरि के तीर्थप्रसाद को देते हुए ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी व निर्दिष्ट प्राधिकारी का रूपांतरण श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस., और तिरुपति संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्रीमती सदा भार्गवी, आई.ए.एस.

दि. ३०-०६-२०२१ को तिरुपति स्थित श्रीवेंकटेश्वर गोसंरक्षण शाला के साथ-साथ राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (तिरुपति) में हुए तालपत्र ग्रंथालय को भी जाँच करते हुए ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी डॉ.के.एस.जवहर रेड्डी, आई.ए.एस., जी और अन्य उन्नताधिकारीगण।

नैच्यानुसंधान

- श्रीमती रूपाली गोविंद रांदड़
मोबाइल - ८९०४७६५००५

नैच्य का अर्थ है नीचता/निकृष्टता। और **नैच्यानुसंधान** का अर्थ है अपनी नीचता/निकृष्टता को देखना, अपने दुर्गुणों को देखना, अपने आप को यथार्थ में नीच समझना (केवल सबको बतानेमात्र के लिए नहीं) जब हम अपने आप के दुर्गुण देखेंगे तो अपने आप दूसरों के गुण हमे दिखाई पडेंगे। वर्तमान में हम अपने गुण देखते हैं तो हमे दूसरों के दुर्गुण/दोष दिखते हैं। यह वैष्णवता के आंतरिक स्वरूप की नीव है। जैसे बाह्य स्वरूप में तिलक मुख्य है वैसे ही आंतरिक स्वरूप में नैच्यानुसंधान मुख्य है।

नैच्यानुसंधान की जरूरत क्यों हैं -

खुद के गुणों का अनुसंधान करने से अहंकार-ममकार बढ़ता है। और भगवद-भागवत-आचार्य में दोषों को देखने से आचरण बिगड़ता हैं इसीलिए नैच्यानुसंधान की जरूरत हैं।

भगवान तो दोष शून्य हैं और अनन्य भागवतों में और आचार्यों में दोष नहीं होता। वे भगवान की लीला में सहयोग करने के लिए संसार में रहा करते हैं। लेकिन दुर्वासनाओं से कलुषित मन के कारण उनमें दोष दिखते हैं। अगर जीव नैच्यानुसंधान रखे तो इनमें गुण और स्वदोष दिखेंगे। नैच्यानुसंधान याने स्वदोष देखना तथा भगवान-भागवताचार्य के गुण देखना यही सर्वोत्तम कालक्षेप हैं।

वार्ता

श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शन करते वक्त कुछ अर्चक लोग भट्टरस्वामीजी को देखे बिना द्वेष भाव से उनकी गलतियों के बारे में चर्चा कर रहे थे, तब स्वामीजी ने उन अर्चकों का आभूषण और वस्त्रों से सम्मान किया और कहा ''श्रीवैष्णवों को सदैव दो कार्यों को करना चाहिये, भगवान के गुणों का अनुभव करना और अपने दोषों को देखना। मैं भगवान के गुणों का अनुभव करते हुये अपने दोषों को देखना भूल गया था आपने कृपा करके मेरे दोषों को बताया इसलिये मैं आपका सम्मान कर रहा हूँ।''

पराशर भट्टर स्वामीजी ने एक कवि को उनके गुणगान करने पर कुछ नहीं दिया तब उसने क्रोधित होकर उनके दोषों का गान किया तब उन्होंने उसे एक बहुमूल्य पारितोषिक दिया।

भागवताचार्य में दोष दिखाई पड़े तो समझना चाहिए की अपने में ही दोष है। हमारी नजर जैसी है वैसी ही दिखाई देती है। जैसे (रंग का) चष्मा पहनेंगे वैसे ही संसार हमें दिखाई पड़ेगा। अगर हम दूसरों के दोषों को देखेंगे, तो दोष ही दिखाई देंगे। लेकिन जीव का स्वभाव है अपने दोषों को राई के बराबर तुच्छ समझते है, और महानुभावों के छोटे-छोटे दोषों को पहाड़ के बराबर समझते हैं। और यह परिस्थिती बड़ी भयानक हैं जीव के अधोगति के लिए पर्याप्त हैं। स्वदोषानुसंधान करते रहना ही अधिक लाभकारी है कारण इससे दोषों से बचने की प्रवृत्ति होती है तथा अहंकार नहीं होता।

यदि कोई श्रीवैष्णव अपना अनादर करे तब उस अनादर से दुःखी न होना चाहिए किन्तु यह समझ प्रसन्न होना चाहिए की इन्होंने ऊपर से ही नहीं अपितु हृदय से मुझ दास को अपना लिया है। इन्होंने जो कुछ कहा अनादर किया वह मेरी भलाई के लिए इससे मेरा स्वरूप उज्ज्वल होगा।

वार्ता -

कलिवैरिदास स्वामीजी रंगनाथ भगवान के दर्शन कर रहे थे उस समय तोझप्पार (दाशरथी स्वामीजी के वंशज थे) ने कलिवैरिदास स्वामीजी का क्रूर वचनों द्वारा उनका अपमान किया। उनकी पत्नी को किसी ने इस घटना का विवरण दे दिया था जब तोझप्पार अपने घर पर लौटे तब, उनकी पत्नी ने तोझप्पारजी को उनकी गलती के बारे में समझाया और कलिवैरिदास स्वामीजी के वैभव को बताया। तोझप्पारजी क्षमा माँगने के लिए कलिवैरिदास स्वामीजी के पास जाने के लिए अपने घर का दरवाजा खोला, तो सामने कलिवैरिदास स्वामीजी स्वयं क्षमा माँगने के लिये उनके घर पर आये। कलिवैरिदास स्वामीजी ने कहा आपसे क्षमा चाहता हूँ, मेरे गलत आचरण के कारण आप को कष्ट पहुँचा और आपको क्रूर वचनों का प्रयोग करना पड़ा। कलिवैरिदास स्वामीजी की गलती नहीं होते हुये भी उन्होंने क्षमा याचना की। तोझप्पारजी ने कलिवैरिदास स्वामीजी की शरण ग्रहण कर आजीवन उनका कैंकर्य करते रहे।

जो श्रीवैष्णव अभी-अभी इस मार्ग पर चलने की कोशिश कर रहे है उन्हें परम एकांतिक भगवतों का साथ और अनुकरण करना चाहिए। तब यह नहीं सोचना चाहिए कि वह भी पहिले ऐसे नहीं थे उन पर अब पूर्णतः भगवत आचार्य कृपा है और वे भगवद अनुभव में लगे हुए हैं। उनमें अगर कोई दोष है फिर भी उसे अनदेखा कर उनके गुणों का अनुसंधान करें। अपने आप को सबसे निकृष्ठ समझे। मेरी वजह से दूसरों की अधोगति हो रही है ऐसी सोच हमेशा रखें। कितना भी ज्ञान क्यों न हो जाए मुझसे नीच कोई नहीं यही अनुसंधान करें।

वार्ता -

श्रीरंगम मंदिर में एक बार संप्रोक्षण चल रहा था तब भट्टरस्वामीजी ने पूछा की संप्रोक्षण क्यों चल रहा है, वहाँ के अर्चकों ने बताया मंदिर में कुत्ता प्रवेश किया इसलिये संप्रोक्षण चल रहा है। यह सुनकर स्वामीजी बोले मैं मंदिर में रोज आता हूँ, मंदिर कितना अशुद्ध हुआ होगा, उस कुत्ते से भी मैं गया बीता हूँ। स्वामीजी विद्वान होने पर भी उनका इतना नैच्यानुसंधान था।

आचार्य और आल्वार हमेशा नैच्यानुसंधान रखते थे और यह उनके ग्रन्थों में अवलोकन कर सकते हैं।

छंदावली में श्रीसीतारामाचार्य स्वामीजी खुद को बद्ध, अज्ञ, दीन, हीन, विषयों में आसक्त, इंद्रियों के वश में, सन्सार में लिप्त ऐसे सम्बोधित करते हैं। एक छन्द में स्वामीजी सरकार कहते हैं,

बहुत सुनी कुछ कथा बहुत सत्संग किया रे,
पर प्रीतम के प्रगट मिलन हित दिल न दिया रे।
जितना जप तप भजन किया तुम लोक देखाऊ,
उतना रोया नाहिं प्रितम प्रगटन हित काऊ ॥६३८॥

श्री यामुनाचार्य स्वामीजी **स्तोत्र रत्न** में कहते हैं कि इस लोक में ऐसा एक भी निंदनीय कर्म नहीं हैं जो मैंने सहस्त्र बार न किया हो। मैं असमर्थ हूँ, क्षुद्र, नीच, खुद को महान समझने वाला, दूसरों के दोष

देखने वाला, पापियों में अग्रगण्य इत्यादि से सम्बोधन करते हैं। मुझमें कुछ भी नहीं हैं इसीलिए आपकी शरण आया हूँ।

" न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी ....त्वत्पादमूलं शरणं प्रपध्ये।" - २२

"न निन्दित कर्म तदस्ति.......... क्रांदामि संप्रत्यगतिस्तवाग्रे।" - २३

"अमर्यादः क्षुद्रश्चलमतिरसूया प्रसवभूः........ परिचरेयं चरणयोः।" - ६२

बहत्तर वाक्यों में श्री रामानुज स्वामीजी कहते हैं, कभी भी श्रीवैष्णव के सामने अपनी प्रशंसा न करें। नित्य नैच्यानुसंधान रत रहें - ४२ यदि किसी श्रीवैष्णव के द्वारा अपना तिरस्कार भी हो जाये तो बुरा न मान कर मौन रहना चाहिये और उसे याद न रखना चाहिये। - ५८

श्री यतिराज विंशति में श्री वरवरमुनि स्वामीजी इस तरह प्रार्थना करते हैं शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध इनके भोग कि इच्छा दूर होने के बदले अभिवृद्ध होती जा रही है। मेरा आचरण एक पशु की तरह है। मैं ढोंगी, मूर्ख, नास्तिक, पापी, नीच हूँ। तीनों प्रकार के अपचार करता हूँ। मेरे जैसा नीच व्यक्ति आपको दूसरा नहीं मिलेगा। इस ज्ञानहीन को आप शरण में लीजिए।

श्री कुरेश स्वामीजी के **"वैकुण्ठ स्तव"** में और श्री शठकोप स्वामीजी की **"श्री सहस्त्रगीति"** में इसी तरह सभी आल्वार-आचार्यों की गाथाओं में स्तुति कम और नैच्यानुसंधान ज्यादा दिखाई देता हैं।

आत्मगुणों के बढ़ने पर भी नैच्य अनुसंधान करते रहना चाहिये। नैच्य अनुसंधान पाखण्ड युक्त दिखावा मात्र नहीं होना चाहिये परन्तु अपने दोषों और अन्यों के गुणों को देखने के कारण ही होना चाहिये। जिस तरह हमें अपने गुणों का स्मरण नहीं करते रहना चाहिये, वैसे ही भागवतों के दोषों को भी नहीं देखना चाहिये।

अगर कोई श्री रामानुज स्वामीजी की या श्रीवैष्णव सम्प्रदाय कि कुचर्चा करता हो या कोई आसुरी प्रवृत्ति वाला भगवद भक्तों की निन्दा करता हो तब अपना नैच्यानुसंधान छोड़ उसे प्रति उत्तर जरूर दे और सम्प्रदाय, भगवद, भागवत, आचार्य कि महिमा का गुण गान करें।

निष्कर्ष -

लौकिक दृष्टि से नैच्य, निकृष्ट या नीचा होना भगवद प्राप्ति के लिए उत्कृष्ट होता हैं क्योंकि परिस्थिति अनुसार नैच्यानुसंधान जरूरी हैं और अहंकार विषय तृष्णा को दूर रखता हैं। उपायान्तर-प्रयोजनान्तर भागवतों में नैच्य भावना रहती हैं और जो लोग भागवतों का अनुवर्तन करते है उनकी सेवा करते हैं उनमें नैच्यभावना आजाती हैं। आचार्य के सामने हमेशा नैच्यानुसंधान पूर्वक रहे अपनी बढ़ाई ना करें उनके वचनों का आचरण में ले और उनकी सेवा से आत्मोद्धार करें। आचार्य सन्निधि में

अपनी अज्ञानता को प्रकाशित करे जिससे वे कृपापूर्वक ज्ञानोपदेश करेंगे।

पूर्वाचार्यों के ग्रन्थों से कुछ वार्ताए -

१) श्री शैलपूर्ण स्वामीजी श्री रामानुज स्वामीजी के प्रथम आचार्य थे जिन्होंने श्री वाल्मीकि रामायण का उपदेश दिया। श्री रामानुज स्वामीजी तिरुमल में भगवान के मंगलाशासन के लिये आ रहे थे, उस समय श्रीशैलपूर्ण स्वामीजी श्री रामानुज स्वामीजी का स्वागत और सम्मान करने हेतु तिरुमल नगरी के बाहर आये। श्री रामानुज स्वामीजी ने बोला की आप ने यहाँ तक आने का क्यों कष्ट लिया, किसी बालक को भेज देते। तब श्री शैलपूर्ण स्वामीजी ने कहा की पूर्ण तिरुमल में मैंने ढूंढा लेकिन मेरे से नीच आदमी कोई नहीं मिला इसलिये मैं स्वयं आया हूँ।

२) एक बार श्री दाशरथी स्वामीजी यात्रा करने के लिये निकले। तब उनके शिष्य ने उनकी अनुपस्थिति में सेवा कैंकर्य करने के लिये श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी के यहाँ पर पहुँचे। तब श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी ने सेवा करने आये हुये शिष्य का पंच संस्कार किया और अपनी सेवा में ले लिया। जब श्री दाशरथी स्वामीजी यात्रा से लौटकर आये तब वह शिष्य श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी से कहा की ''श्री दाशरथी स्वामीजी यात्रा से लौट गये हैं अब उनकी सेवा के लिये दास को जाना है'' यह सुनकर श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी श्री दाशरथी स्वामीजी की सन्निधि में लौटकर क्षमा मांगे की आप के शिष्य को दास ने पुनः समाश्रित कर लिया। (श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी को मालूम नहीं था की उस शिष्य का पंच संस्कार श्री दाशरथी स्वामीजी ने किया है) तब श्री दाशरथी स्वामीजी ने उत्तर दिया की ''यदि कोई व्यक्ति नदी में डूब रहा हो तो अगर उस व्यक्ति को दो लोग साथ में मिलकर बाहर निकालते है तो क्या गलत है। इसी तरह अपना शिष्य इस संसार में डूबा हुआ है अगर उसे दो आचार्यों का आश्रय मिला है तो क्या गलत बात है।''

३) भट्टरस्वामीजी श्री रंगराज स्तव में कहते है की देवलोक में देवता बनने के बजाय, श्रीरंगम की गलियों में कुत्ता बनकर रहना श्रेष्ठ है।

४) श्री प्रतिवादी भयंकर अण्णा स्वामीजी श्रीरंगम मन्दिर में पहुँचे उस समय श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी सहस्त्रगीति का कालक्षेप कर रहे थे, समीप जाकर साष्ठांग करते हुये अपनी अकिंचनता का प्रकाश किया, श्रीवरवरमुनीन्द्र स्वामीजी ने अपने आसन का परित्याग कर आनन्दित होकर गाढ़ालिंगन किया। श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी ने कालक्षेप को विराम किया, तब इसका कारण पूछने पर श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी ने कहा- आप प्रतिवादी भयंकर हैं, मैं तो एकांतिक साधू हूँ, आपके सामने हम क्या सुनावें। इसको सुनकर स्वामीजी अत्यंत दुखी हुये और कहा मेरी विद्वता को धिक्कार है, क्योंकि यह मेरे आचार्य के प्रवचन का रुकावट बनी है। स्वामीजी ने कहा कि- ''मैं वादियों के समुदाय में अवश्य ही प्रतिवादी भयंकर हूँ, किन्तु श्रीवैष्णवों की गोष्ठी में उनका दास ही हूँ।''

५) श्रीकृष्णपादस्वामीजी कहा करते थे; अनन्य प्रयोजन रहित होने के कारण मैं भगवत्प्राप्ती का विषय नहीं हूँ। आर्त होकर हमने शरणागति नहीं की, अतः भगवत्कृपा का पात्र भी मैं नहीं हूँ। अबुद्धि पूर्वक (प्रमाद से) किये गये अपराध क्षमा के विषय हो सकते हैं, किन्तु हमारे समस्त अपराध अप्रामादिक (बुद्धि पूर्वक) हैं, अतः मैं क्षमा का भी पात्र नहीं हो सकता। प्रपन्न को ऐसे ही नैच्यानुसंधान रखना चाहिये।

श्री वेंकटेश सुप्रभात

स्तोत्र रचना - श्री प्रतिवादि भयंकर अण्णा स्वामीजी

व्याख्या - श्री यू.वी.पी.बी.श्रीनिवासाचार्यजी

मोबाइल - ९३६४३२४८४

(गतांक से)

ब्रह्मादयस्सुवरास्समहर्षयस्ते
सन्तस्सनन्दनमुखास्त्वथ योगिवर्याः।
धामान्तिके तव हि मङ्गलवस्तुहस्ताः
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।२७।।

पदार्थ -

समहर्षयः - महर्षियों के सहित,

ब्रह्म आदयः सुरवराः - चतुर्मुख आदि उत्कृष्ट देवता भी,

अथतु - और भी,

ते सन्तः - आप भी जिनको मानते हैं,

ऐसे सनन्दन मुखाः - सनन्दन आदि,

योगिवर्याः हि - उत्कृष्ट योगी भी,

मङ्गलवस्तुहस्ताः - माङ्गलिक पदार्थों को हाथ में लिये हुए,

तव - आपके,

धाम अन्तिके - मंदिर के समीप में (सन्ति हैं)।

श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्।

भावार्थ - मुनि, देव, योगी ये लोग आपको भेंट करने के उद्देश्य से, दर्पण (आईना) व्यजन (पंखा) आदि मांगलिक वस्तुओं को हाथ में लिए आपके मंदिर के पास आकर खडे हुए हैं। हे वेंकटनाथ! आपको यह सुप्रभात हो।

विशेषार्थ - अत्रि आदि सात ऋषि महर्षि हैं। ये और ब्रह्म आदि देवता, ब्रह्म भावना तथा कर्मभावनायुक्त हैं। सिर्फ ब्रह्मभावायुक्त सनन्दनादि योगी, (उपरोक्त दोनों से बढ़कर) भगवान के प्रेम के पात्र हैं। अतः ''ते सन्तः'' कहा गया। ब्रह्मभावना - ब्रह्मध्यान, कर्मभावना - कर्मानुष्ठान। पूर्ण कुम्भ, चामर, दर्पण, पंखा, नगाड़ा, दीप, ध्वजा ये सब मांगलिक वस्तु हैं ।।२७।।

लक्ष्मीनिवास निरवद्य गुणैकसिन्धो
संसारसागरसमुत्तरणैकसेतो।
वेदान्तवेद्यनिजवैभव भक्तभोग्य
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।१८।।

पदार्थ -

लक्ष्मीनिवास - हे लक्ष्मी जी के (वास करने योग्य) स्थान,

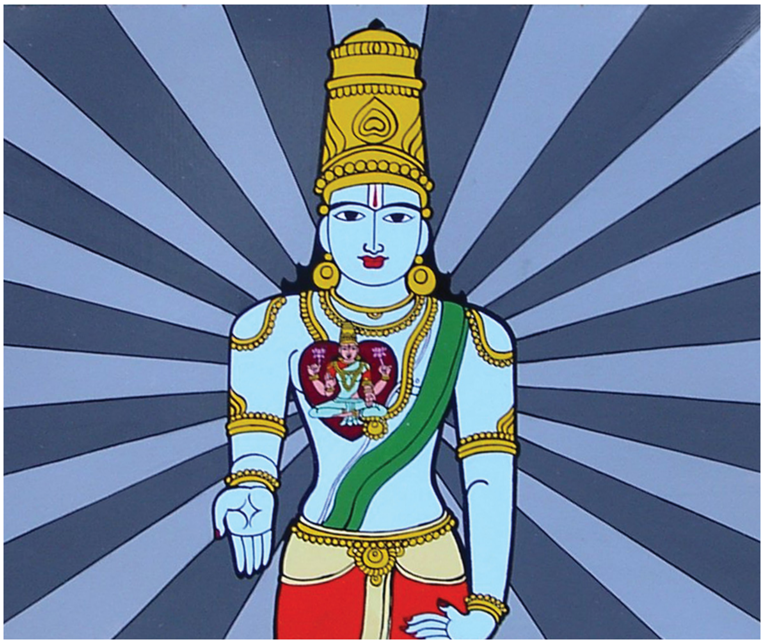

निरवद्य - हे दोष रहित,

गुण एक सिन्धो - हे गुणों के समान रहित (बेजोड़) सागर,

संसार सागर समुत्तरण एक सेतो - संसार रूपी समुद्र को पार करने का एकमात्र सेतु,

भक्त भोग्य - हे भक्तों के भोग्य,

वेदान्त वैद्य निजवैभव - हे उपनिषदों से जाने वाले स्वाभाविक वैभव वाले,

श्री वेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्।

भावार्थ - लक्ष्मी के वास (करने योग्य) स्थान, दोष रहित गुणों के सागर, संसार को पार कराने वाले सेतु, अपने भक्तों के प्रिय ऐसा उपनिषदों से भी प्रशंसित महिमा वाले श्री वेंकटनाथ यह आपको सुप्रभात हो।

विशेषार्थ - भगवान के स्वरूप को, लक्ष्मीजी जैसा अपने स्वरूप से आश्रित रहती है वैसा दिव्यमंगल विग्रह से भी भगवान के दिव्य मंगल विग्रह को आश्रित रहती है। यह श्री यामुनाचार्य (आलवन्दार) जी को ''चतुःश्लोकी'' स्तोत्र के शान्तानन्त इस चौथे श्लोक में वर्णित है। 'निरवद्य' 'गुणैकसिन्धो' इन दोनों शब्दों से हेयप्रयत्नीकत्व (दोषों के परे रहना) कल्याणगुणाकरत्व (शुभ गुणों के पूर्ण स्थान) यह अर्थ क्रमशः बताया गया है। 'निरवद्यगुणैकसिन्धो' (ऐसा एक ही पद माने तो) निरवद्य यह गुणों का विशेषण होकर दोष रहित गुणों के समान रहित (बेजोड़) सागर ऐसा अर्थ होगा। वात्सल्यादि गुणों का भगवान के स्वातन्त्र्य से दब जाना ही दोष है। लक्ष्मीजी के पुरुषकार से, भगवान के, पापियों को अवश्य दंड दूँगा। यह स्वातन्त्र्य दब जाकर गुणों का उत्थित होना ही (दोष) 'रहित' कहने का मतलब है।

गुणों के उत्थित होने से, भगवान आश्रितों के दोषों को ही गुण मानकर, उपाय होकर, मोक्ष देने का जो स्वभाव है, उसे बतानेवाले आगे के शब्द हैं। मोक्ष देने के बाद उनको भोग्य (प्रिय) भी होते है। यह अर्थ ''भक्तभोग्य'' इस शब्द से कहा गया है। भगवान के इन वैभवों को हम उपनिषदों से जान सकते हैं। 'वेदान्तवेद्य निजवैभव' इस शब्द से यह अर्थ कहा गया है। वेदान्त-उपनिषत्।

''हीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ', भूदेवी और श्रीदेवी दोनों आप की पत्नियाँ हैं।, पुरुष सूक्त का यह वचन 'लक्ष्मीनिवास' कहने का प्रमाण है। ''निरवद्य'' इसका प्रमाण (वचन) अपहतपात्मा विजरः विमृत्युः विशोकः विजिघत्सः अपिपासः (छा. उ. ८-७-१) (पापरहित, बूढेपन रहित, मृत्यु रहित, दुःख रहित, भूख रहित, प्यास रहित) है। गुणैकसिन्धो इसका प्रमाण 'सत्यकामः' (छा.

उ. ८-७-१) यह वचन है। नित्य (शाश्वत) कल्याणगुण आदि युक्त है (इस वचन का यह अर्थ है) 'लक्ष्मीनिवास निरवद्यगुणैकसिन्धो' इसका 'श्रद्धया देवो देवत्वं अश्नुते' (यजु काठक ३-३) जिस लक्ष्मीजी को "यह हमारा पुरुषकार है" ऐसा विश्वास हम जिन पर रखते हैं, उनके संबंध से भगवान भी दोषविहीन गुणयुक्त ऐसे स्तुत्य (स्तोत्र के पात्र) होते हैं। "संसारसागर समुत्तरणैकसेतो" इसका "अमृतस्यैष सेतुः" (मु. उ. २-२-५), मोक्ष को प्राप्त कराने वाला सेतु, यह प्रमाण है। "भक्तभोग्य" इसका "रसो वै सः" (तै. उ. आ.वल्ली), वह परब्रह्म अनुभव योग्य रस (स्वादिष्ट) है, प्रमाण है (ऐसे अन्य प्रमाण वचनों को देख लें।)

इत्थं वृषाचलपतेरिह सुप्रभातं
ये मानवाः प्रतिदिनं पठितुं प्रवृत्ताः।
तेषां प्रभातसमये स्मृतिरङ्गभाजां
प्रज्ञां परार्थसुलभां परमां प्रसूते ॥२९॥

पदार्थ -

इत्थं - ऐसा,

वृषाचलपतेः - श्रीवेंकटाचलपति को,

सुप्रभातम् - 'सुप्रभात' को बताने वाले इस स्तोत्र को,

इह - इस वेंकटाचल में,

ये मानवाः - जो मनुष्य,

प्रतिदिनम् - हर रोज,

पठितुं प्रवृत्ताः - बोलने (पाठ करने) प्रवृत्त होते हैं,

तोषां - उनको,

प्रभात समये - प्रभात (भोर) के समय,

स्मृतिः - स्मरण करना (भी),

अङ्गभाजाम् - देह वाले मनुष्यों को,

पर अर्थ सुलभाम् - पर (उत्कृष्ठ) अर्थ को प्राप्त करने योग्य,

परमां प्रज्ञाम् - उत्कृष्ठ ज्ञान को,

प्रसूते - प्रदान करता है।

भावार्थ - इस प्रकार श्री वेंकटाचलपति को जगाने वाले सुप्रभात स्तोत्र को जो हर रोज श्री वेंकटाचल में रहकर पाठ करते हैं, उनको प्रातःकाल में, जो स्मरण करते हैं वह स्मृति (स्मरण) ही, (पाठ करने वालों का स्मरण करना मात्र पर्याप्त है, स्वयं पाठ करने की जरूरत नहीं) उनको भक्ति देकर (पैदाकर) परमात्मा से मिला देगा, इसमें कोई संदेह नहीं है।

विशेषार्थ - श्री वेंकटाचलपति (बालाजी) के इस सुप्रभात स्तोत्र का जो लोग पाठ करते हैं, उन मनुष्यों को पाठ करते-करते प्रातःकाल में (स्तोत्र प्रतिपाद्य) भगवान का स्मरण (चिन्तन) भी रहे तो, वह (भगवान का स्मरण) भक्ति व प्रपत्ति को पैदा करेगा।

जो लोग पाठ करते है, पाठ करने वाले उस व्यक्ति का स्मरण (स्वयं पाठ नहीं करे भगवान का भी स्मरण न करे) करने वाले लोगों को भक्ति आदि को पैदा करेगा।

पाठ करने वाले, वे प्रातःकाल में जिनको स्मरण करते हैं, वह स्मरण उनको (स्मरण में आये उन व्यक्ति को भी) भक्ति आदि को पैदा करता है।

ऐसा तीन (प्रकार) अर्थ अनुगृहीत करते हैं (बताते हैं।) "उत्तरोतरं बलीयः।"

श्रीवेंकटेश सुप्रभात की व्याख्या पूर्ण हुई।

समाप्त

(गतांक से)

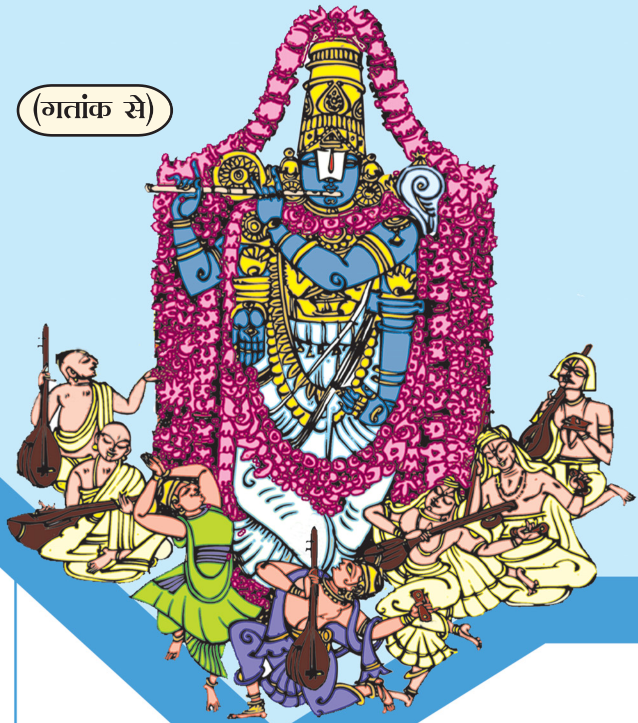

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु
हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

"तप्पुकाणिके कप्पगळनु समस्त द्वीपदलिन्द तरिसुव।
उप्पु ओगरगळने मारिसि उचित दिंदलि हणवगळिसुव।
इप्पत्तुदुड्डिगेसेरु तीर्थव ओप्पदलि क्रयमाडि कोडिसुव।
सर्पशयन सार्वभौमन अप्पतिरुपति वेंकटेश।।"

(समस्त द्वीपों के भक्तों के द्वारा लाये गये मनौतियों को जो स्वीकारता हो, दही चावल को प्रसाद के रूप में बँटवाने तथा भक्तों के भेंटों को जो स्वीकारता हो, मिन्नतों को जो स्वीकारता हो, उस सर्पशायी, सार्वभौम, जगज्ञनक तिरुपति वेंकटेश्वर स्वामी को मैंने देखा।)

"उरदि श्रीदेवियळकंडेनु उन्नतद कौस्तुभव कंडेनु।
गरुड़ किन्नर नारदादि गंधर्वर एड़बल्दलि कंडेनु।
तरतरदि भक्तरिगेवरग करेदु कोडुवुदु निरुत कंडेनु।
शरधिशयन शेषगिरिय वरद पुरंदर विठल वंघ्रिय।।"

(स्वामी के वक्षःस्थल में प्रकाशमान कौस्तुभमणि को, श्रीदेवी मैया को, स्वामी के दोनों ओर नम्रतापूर्वक विराजमान गरुड़, किन्नर, नारद आदि को, स्वामी के आगे विराजमान अनेकानेक भक्तगण, स्वामी, उनको बुलाकर वर प्रदान करने का दृश्य, शेषशायी, शेषगिरिवासी, पुरंदर विठल रूपी श्रीवेंकटेश्वर स्वामी को तथा उनके चरणकमलों को मैंने देखा, दर्शन किया।)

पुरंदरदास अपने संकीर्तन में जिस भांति तिरुमल पहाड का, पहाड़ पर स्थित मंदिर का, मंदिर के आंगन के गरुड़स्तंभ का, जय-विजय का, स्वामी के दिव्यमंगल मूर्ति का, उस मूर्ति के सौंदर्य का, स्वामी को समर्पित उत्सवों का, वर्णन प्रस्तुत किया, उसको गाते समय, गायक भी अपने हृदयपटल में इन दृश्यों को आखिन देखी समझकर बड़े चाव से गाते हैं। यह कीर्तन मध्यमावती राग में गाया जाता है।

"बंदुनिंतिह नोडि। भूतळदि वेंकट।
वोंदिरेय गुडगूडि। ओप्पन निरंतर।
पोंदि भजनेयमाडि। आनंदगूडि।। (बेडि)"

(लक्ष्मीदेवी के साथ, बड़े वैभव के साथ वेंकटेश्वर स्वामी इस पृथ्वी पर आ खड़ा है। उसका आश्रय पाकर, भजन-पूजादि करके आनंद प्राप्त कीजिए।)

"वंदिसुत मनदोकगे इवनडि
द्वन्द्व भजिसलु बंद भयहर।

इंदुधर सुरवृंदनुत गो...

विन्द घनदय सिंधु श्रीहरि।''

(मन में इस स्वामी के चरणकमलों की पूजा-भजन करने पर मन का भय दूर हो जाएगा। यह स्वामी शिव, इंद्र आदि के द्वारा स्तुत्य रहते हैं। यह गोविन्द, दयासिंधु रूपी श्रीहरि हैं।)

''द्वार देड़बलदल्लि। जयविजय रिब्बरु,

पेरि से विपरल्लि। सनकादिनुतश्रृं

गार निधि अंगदल्लि। मुत्तिनलि हार

शोभिपुदल्लि विस्तार दल्लि।।''

''वार वारके पूजे गोम्बुव। हारमुकुटा भरण कुंडल

धार भुजकेयूर भूषित। मारपेत गुण मोहनांग।

चारु पीताम्बर कटि कर वीर हल्हरादि पूविन।

हार कोरळोळु एसुवुतिरेवद!

नारवंदनु नगुतनलियुत ।।बन्द।।''

(स्वामी के गर्भगृह के आगे, द्वार के दोनों ओर जय-विजय के द्वारा स्वामी की सेवा करना, सनक सनंदादि के द्वारा स्तुत्य (श्रीनिवास), शोभायमान जिनके भरपूर श्रृंगारात्मक देह पर मुक्ताओं की मालाएँ सुशोभित, हर समय जो पूजादि को स्वीकारनेवाला, सुवर्ण कंठाभरण, कर्णपुट के मकरकुंडल, भुज किरीटों, शिरोमुकुट से विभूषित, मन्मथ जनक, सुंदरस्वरूपवान, कंठमालाओं के कारण जो सुंदर है, मृदुमंदस्मिति के वदन के साथ जो प्रकाशमान खड़ा हो।)

''एल्लभकुतराभीष्ट। कोड्डुवुदकेताकै।

वल्य स्थानव बिट्ट। शेषाद्रिमंदिर।

दल्लि लोलुपदिट्ट। सौभाग्यनिधिगिदि।

रिल्ल भुजबलपुष्ट। कस्तूरियिट्ट।।

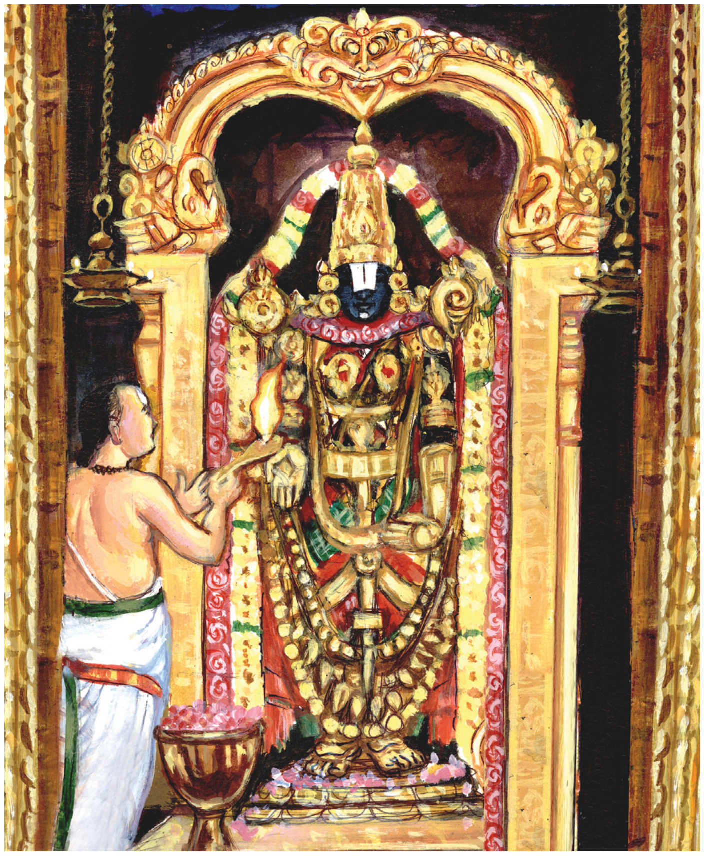

चेल्व फणेयलि शोभिसुव सिरि।

वल्लभसगुण पोगळदिह जग

खल्लरेदेल्लण पराक्रम। मल्ल मर्दन मातुळारि।

फल्गुण सख प्रकटनागिह। दुर्गभनु अघदूर बहुमां।

कल्य हृदयवु स्टष्टिगो। उल्लासकोड्डुतलि चेंदरिंदलि।।''

(समस्त भक्तों को मनोकामनाओं की आपूर्ति के लिए श्री वेंकटेश्वर स्वामी, कैवल्यस्थान वैकुंठ को छोड़कर इस शेषाद्रि पर आ बसा है। यह स्वामी सौभाग्य निधि के नाम से सुकीर्तित हैं। यह स्वामी अजेय हैं। भुजबलवान, प्रकाशमान मस्तक पर कस्तूरी तिलक को धारण करनेवाला, दुष्टों का संहार करनेवाला, मल्ल दैत्य का संहारक, मातुलांतक, पार्थ का सखा, इतनी आसानी से नहीं मिलने वाला, पापों का हरणकर्ता, भक्तों को वर प्रदान करनेवाला, अतिसुंदर स्वामी हैं।)

क्रमशः

(गतांक से)

मंगलाशासन पाशुरम्

तमिल मूल - श्री टी.के.वी.एन. सुदर्शनाचार्या

हिन्दी अनुवाद - श्री के.रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

सुमन्दु मामलर् नीर सुडर दूपम् कोण्डु
अमर्न्दु वानवर् वानवर् - कोनोडुम्
नमन्दु एऴुम् तिरुवेंगडम् - तंगट्कु
समन् कोळ् वीडु तरुम् तडंग कुन्ड्रमे।। (२९२५)

कठिन शब्दार्थ - मलर-फूल, सुडर-दीप, वानवर-देवगण, वीडु-मोक्ष, कुन्ड्रम-पर्वत

भावार्थ - हम जानते हैं कि भगवान की उपासना में बहुमूल्य चीजों की जरूरत नहीं है। सिर्फ जल, फूल, धूप, दीप आदि काफी हैं। याने जल से भगवान की मूर्ति को साफ करते हैं; विभिन्न रंगों के फूलों से उस मूर्ति को सजाते हैं; चंदन के चूर्ण को डालकर धूप बनाकर चारों ओर सुंगध फैलाते हैं और आखिर दीप दिखाकर प्रार्थना करते हैं।

इस प्रथा पर बल देते हुए संत कवि नम्माळ्वार गाते हैं, ''खूब विकसित फूल, साफ एवं पवित्र जल, उज्वलित उत्तम दीप, सुगंधित धूप आदि को हाथ में लेकर देवगण आते हैं। वे सब निष्काम्य भाव से अपने नेता सेनैमुदलियार के साथ आते हैं। वे अपने को भगवान विष्णु के दास के रूप में प्रकट करने के लिए नमः का उच्चारण करते हुए आते हैं। वे तिरुवेंकट गिरि में आ पहुँचकर नमस्कार करते हैं। वह स्थान तो इतना विशाल एवं समृद्ध है। वह गिरि तो एक ऐसा विशेष स्थान है जो भगवान विष्णु के पास पहुँचना चाहते हैं, उनको मोक्ष प्रदान करने का मूर्त रूप है। इसलिए वह गिरि भगवान के सच्चे भक्त को मोक्ष दिलाने का श्रेष्ठ स्थान है।''

कुन्ड्रम एन्दि कुळिर् मळै कात्तवन्
अन्डु ज्ञालम् अळन्द पिरान, परन्

सेन्ड्रु सेऱ् तिरुवेंगड मा मलै

ओन्ड्रुमे तोळ नम् विनै ओयुमे।। (२९२६)

कठिन शब्दार्थ - मळै-वर्षा, ञालम-संसार, मलै-पर्वत, तोळ-नमस्कार करना, विनै-पाप

भावार्थ - हम जानते हैं कि भगवान विष्णु अपने अवतारों के द्वारा भक्तजनों की रक्षा करते हैं। उन्होंने गीता में भी उल्लेख किया है कि जब धर्म पर हानि पडती है तब वे वहाँ आकर उसकी रक्षा करेंगे। इसलिए भगवान विष्णु के दशावतार भी इसी तथ्य को प्रकट करते हैं।

संत कवि नम्माळ्वार गाते हैं, ''भगवान विष्णु बडे दयालू हैं और वे अपने भक्तों पर बडी कृपा रखने वाले हैं। उन्होंने ठंडी वर्षा के समय गोवर्धन गिरि को अपनी उंगली से उठाकर गायों और गोपालकों की रक्षा की थी। उन्होंने एक बार असुरराज बली के घमंड को निर्मूल करने के विचार से सारे ब्रह्मांड को नाप डाला और प्रकट किया कि इस संसार में भगवान से श्रेष्ठ कोई नहीं। वे सबसे महान एवं श्रेष्ठ हैं। अपने भक्तों पर दया करने वाले भगवान विष्णु वेंकट गिरि पर आकर निवास करते हैं। इसलिए उस उत्तम पर्वत को नमस्कार करें तो हमारे सारे पाप मिट जाएंगे।''

क्रमशः

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

तिरुमल यात्री इनका आचरण न करें, तो अच्छा होगा।

- ☒ अपने साथ कीमती आभूषण या अधिक नकद न रखें।
- ☒ भगवान के दर्शन के लिए मात्र ही तिरुमल पधारें, अन्य किसी उद्देश्य से नहीं।
- ☒ दर्शन के लिए जल्दबाजी न करें, क्यू लाइन में ही सक्रम जाने का प्रयत्न करें।
- ☒ मंदिर के आचार-व्यवहारों के अनुरूप मंदिर में प्रवेश निषिद्ध है, तो कृपया मंदिर को न आवें।
- ☒ तिरुमल में सभी फूल भगवान की पूजा के लिए है इसलिए पुष्पों का धारण न करें।
- ☒ पानी और बिजली को वृथा न करें।
- ☒ अपरिचितों को काटेज में प्रवेश न दें। चाबियों को उन्हें न सौंपें।
- ☒ पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रिक थैलियों के अलावा किसी अन्य प्लास्टिक थैलियों का उपयोग न करें।
- ☒ चार माडावीथियों में चप्पल धारण न करें।
- ☒ भगवान दर्शन और आवास के लिए धोखेबाज या दलाल से संपर्क न करें।
- ☒ फेरीवालों से नकली प्रसाद मत खरीदें।
- ☒ तिरुमल मंदिर के परिसरों में थूकना आदि असह्य कार्य न करें।
- ☒ सेलफोन, कैमेरा जैसी चीजें और आयुधों को मंदिर के अंदर न ले जायें।
- ☒ विविध राजकीय कार्यकलाप, सभायें, ब्यानर, रास्तारोक, हडताल आदि सप्तगिरियों पर निषेधित है।

तिरुमल में निषेधित कार्य

- ⃠ तिरुमल में धूम्रपान, शराब, मांसाहार आदि निषेधित हैं।
- ⃠ अन्य मतों का प्रचार न करें।
- ⃠ पशु, पक्षी का वध निषेधित है।
- ⃠ तिरुमल में जुआ, पासा आदि को खेलना या अन्य खेलों में धन को बाजी लगाना निषेधित है।
- ⃠ भिखमंगों का प्रोत्साहन न करें।
- ⃠ तिरुमल में प्रईवेट व्यक्तियों द्वारा केशखंडन या कल्याणकट्टाओं (क्षुरकशाला) को चलाना निषेधित है।
- ⃠ आवास को अनधिकारिक तौर पर देना या लेना मना किया गया है।

(गतांक से)

अनुक्रम - IV

श्रीमद्भगवद्गीता

तेलुगु मूल -
आचार्य कुप्पा विश्वनाथ शास्त्री

हिन्दी अनुवाद - श्री बी.राजीव रत्न
मोबाइल - ९४४०९२६८३०

श्रीगुरुभ्यो नमः

परमात्मा भगवान अखिलाण्डकोटि ब्रम्हांड के नायक विष्णु पिता हो तो श्रीमद्भगवद्गीता उनके मुखारविंद से उच्चरित वाक्। जगत जननी हमारी माता हमें अर्जुन की तरह बदलने को कह रही हैं। अर्जुन की तरह योग्य बनने को कह रही हैं। अर्जुन की तरह योग्य होने पर हम अच्छे उपदेश प्राप्त कर सकते हैं। अच्छे उपदेशों की अनुभूति प्राप्त कर सकते हैं। अच्छे उपदेशों का आचरण कर सकते हैं। ऐसा वह कर रही हैं। इसलिए हम सब अर्जुन की तरह बदले रहे। अर्थात् क्या दूसरों की तरह न बदलें? न बदलें, दुर्योधन की तरह बिल्कुल न बदले। क्यों न बदले दुर्योधन की तरह बदलने पर कैसे हानि होती है इसका उपदेश स्वयं श्रीमद्भगवद्गीता दे रही है। इससे पहले जैसे हमने कहा था कि दुर्योधन उनके गुरु द्रोणाचार्य के पास गए थे और संभाषण आरंभ किया था। सामान्यतः हम सभी बचपन में विद्यार्जित करवाने वाले गुरु के पास जाने पर आदर पूर्वक बात करते हैं। उन्हें प्रणाम करते हैं। यदि हममें पूर्ण परिपक्वता हो तो हम उन्हें साष्टांग प्रणाम करते हैं। उन्हीं को ईश्वर मानते हैं। किंतु यहाँ दुर्योधन जाकर -

पश्येताम् पाण्डुपुत्राणाम्
आचार्य महतीम चमु।
प्यूधाम द्रुपद पुत्रेणा तव
शिष्येणा धीमताम्॥

कहा हे गुरु देखो क्या देखू। ''पाण्डुपुत्राणाम् महतीम चमु,'' पांडू पुत्र बड़ी सेना लेकर आए हैं। लाकर खड़ा किया सम्मुख में बैठा हूँ व्यूहात्मक ढंग से खडे हैं। युद्ध के लिए जैसे चाहिए वैसे ही व्यूह रचना कर खड़े हैं। उस व्यूह के नेता कौन हैं। दृष्टद्युम इस व्यूह का नेता है। कौन है यह दृष्टद्युम? द्रुपद महाराज का पुत्र। पाण्डु पुत्र के सालेसाहब। वह द्दष्टद्युम व्यूह का संचालन कर रहा है। कौन है द्दष्टद्युम आप ही का शिष्य आप ही के पास विद्याभ्यास कर तुम्हारे ही सम्मुख खड़ा व्यूह का संचालन कर रहा है। तुम्हारे पास विद्या अभ्यास करने वाले पांडव तुम्हारे सम्मुख व्यूहात्मक ढंग से खड़े खड़े हैं। द्दष्टद्युम कैसा है। ''धीमता''

कुशाग्र बुद्धि वाला। उसके व्यूह से ही जान पड़ता है। अच्छे व्यूह में खड़ा है। प्रतिदिन किस व्यूह में आना है उसी व्यूह में खड़ा है। इसीलिए इसे एक बारे देखने को दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से कहा। अब तक इतनी ही बात सामान्यतः हमें समझ आती है। वास्तव में इस में दुर्योधन का अभिप्राय क्या है यह जाने से पूर्व इस श्लोक के मुख्य शद्ब को समझें। इस श्लोक में मुख्य शद्ब ''आचार्य''। आचार्य कौन हैं। सामान्यतः आचार्य हम गुरु को कहते हैं। कभी-कभी शास्त्रों में गुरु, अध्यापक, आचार्य इस तरह विविध रूपों में आचार्य गुरु का वर्गीकरण करते हैं। किसी भी तरह कहें हम प्राथमिक रूप से गुरु ही मान लेंगे। कौन-कौन गुरु की श्रेणी में आते हैं। सर्वप्रथम माँ। माँ प्रथम गुरु होती है। माँ ही प्रथम गुरु बाद में पिता गुरु। निसर्ग गुरु पिता को कहा जाता है। अर्थात् ईश्वर द्वारा प्राप्त सहज गुरु माँ होती है। इन्हें प्रथम गुरु कहने में संदेह नहीं। पिता सहज रूप में हमारे लिए गुरु की तरह उत्पन्न हुए हैं। इसलिए गुरु कहलाते हैं। यह न होकर विद्या, ज्ञान आदि प्राप्त करवाने वाले गुरु होते हैं। यह न होकर हमें ज्ञान उपदेश देने वाले गुरु हैं, सद्गुरु हैं सभी गुरु हैं। वे सारे आचार्य हैं। किंतु आचार्य शब्द में एक स्वरस अवश्य है। एक स्थान पर आचार्य शब्द का अर्थ इस प्रकार बताया गया -

अचिनोतिः शास्त्राधर्म आ चारे स्थापयत्यपि।
स्वामाचरतेवस्त उत्तमाचार्यम् प्रचक्षते।।

अर्थात् आचार्य कौन शास्त्रों में सारे विषय सही ढंग से जान लेने वाला एक स्थान पर एक विषय को हर स्थान पर हर ढंग से रहने वाले सारे विषयों को संग्रहित कर क्या करें? क्या न करें? कर्तव्य क्या है? जिस कर्तव्य निभाने का निर्णय लिया जाता हो उसे आचरण में वह लाता है। आचरण में लाकर ''आचारे स्थापयत्यपि'' विद्यार्थियों व शिष्य तथा उनके आश्रितों को उस सदाचार पर रखता है। उन्हे सन्मार्ग पर ले चलता है। ऐसे व्यक्ति को आचार्य कहते हैं। आचार्य का अर्थ गुरु वे तीन प्रकार के होते हैं कहा जाता है। बच्चों के दोषों को दूर करते हुए गलत पढ़ने पर सही करते निरंतर अपने को सुधारने का उपदेश देते उन्हें सही मार्ग पर लाते हैं। हमें निरंतर बदलने का अवकाश देने वाले गुरु प्राप्त होना एक जन्म का पुण्य करने पर प्राप्त नहीं होते। अब दूसरे प्रकार के गुरु क्या करते हैं। बच्चों को बुलाकर विषय का अर्थ कैसे ग्रहण करें, कैसे ग्रहण न करें किस तरह पढ़ने पर ठीक रहेगा इस तरह के पाठ्यांश के बारे में अच्छी तरह विवरण देते हैं। इस तरह सही मार्ग पर ले जाना ही नहीं विवरण भी साथ हो तो वह लाजवाब होगा। ऐसे गुरु भी मिलना साधारण पुण्य नहीं। अब तीसरे प्रकारे के गुरु बच्चों को सुधारना विवरण देना यह सब ना कर वे स्वयं आचरण करते हुए उन्हें उनकी निपुणता में एक प्रकार की प्रेरणा लाते हैं। बच्चों को प्रेरणा देना यदि गुरु आचरण करते हुए वे भी एक भगवद्गीता, सुंदरकांड, रामायण, महाभारत पढ़ते हुए मैं पढ़ रहा हूँ तुम भी पढ़ो कहने पर वे प्रेरणा प्राप्त कर पढ़ने लगते हैं। ऐसे गुरु आचार्य कहलाते हैं। कई जन्मों की उपासनाओं के पश्चात ऐसे गुरु की प्राप्ति होती है। ऐसे गुरु किसे प्राप्त हुए। दुर्योधन को प्राप्त हुए द्रोणाचार्य जैसे। पता है ऐसे गुरु के सम्मुख कैसे बात कर रहा है। विनय पूर्वक आचार्य कह रहा है। आचार्य कहने पर हमें सुनने में अच्छा लग रहा है। गुरु को सम्मान पूर्वक संबोधित कर रहा है। किंतु बातों में स्वरस नहीं है। क्यों देखिए ''पश्येताम्'' कहा देखो सामने खड़ी इस सेना को देखो। ठीक है देख लिया आगे क्या कहने पर ''पाण्डुपुत्राणाम् आचार्या'' कह रहा है।

क्रमशः

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

अध्याय - 8

विभिन्न युगों में क्रीडाद्रि के विभिन्न नाम

विभिन्न युगों और भिन्न-भिन्न समयों में अनेक कारणों से क्रीडाद्रि विशिष्ट अभिधानों से (नामों से) मुनियों द्वारा पुकारी गयी है। यथा *कृतयुग* में *वृषभाचल, त्रेतायुग* में *अंजनाचल, द्वापरयुग* में *शेषाचल* और *कलियुग* में *वेङ्कटाचल* (वराह पु. भाग- 1, अ. 4, श्लो. 21 - 37)। इनके अतिरिक्त निम्न उद्धृत नाम भी प्रचलित हैं -

चिंतामणि : वांछित कामनाओं की पूर्ति करने के कारण।

ज्ञानाद्रि : ज्ञान प्राप्त कराने की शक्ति से मण्डित होने के कारण।

तीर्थाद्रि : अनेक पवित्र तीर्थों से युक्त होने के कारण।

पुष्कराद्रि : लाल-लाल सुंदर कमलों से विराजित पुष्करिणियों से संयुत होने के कारण।

वृषाद्रि या धर्माद्रि : अपनी उन्नति के लिए धर्म देवता के इन पवित्र श्रेणियों में तपस्यारत होने के कारण।

इतना ही नहीं, कृतयुग में वृषभासुर नामक राक्षस ने अनधिकार पूर्वक इस पर्वत को अपने आदिन में कर यहाँ के ऋषि - मुनियों को पीडित किया था। लेकिन उसने तुंबुरु तीर्थ में पाँच हजार वर्षों के लिए कठोर तपस्या भी की। इस घोर तपस्या के समय वह हर दिन तुंबुरु तीर्थ में पवित्र स्नान कर अपना सिर काटकर श्रीनरसिंह स्वामी के शालग्राम को एक फूल के समान अर्पित किया करता था। सिर काट ने के तुरन्त बाद उसके शरीर पर एक और नया सिर उग आता था। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान नारायण प्रत्यक्ष हुए। उस राक्षस से कामना पूछा। राक्षस ने कोई वर नहीं माँगा। उसने नारायण के साथ केवल युद्ध करने की इच्छा प्रकट की। भक्त की इच्छा का तिरस्कार भगवान कैसे कर सकते हैं? फलतः दोनों के बीच द्वंद्व युद्ध चला। बहुत समय तक दोनों के बीच समरूप से युद्ध चला। अंततः नारायण को

अपने सुदर्शन चक्र का प्रयोग करना पडा। वृषभासुर भी यही चाहता था। क्योंकि सुदर्शन चक्र से मरने वाले के लिए परमपद (स्वर्ग) प्राप्ति आवश्यंभावी है। परम गति सुनिश्चित हो जाने के पश्चात् असुर ने चाहा कि वह पहाड उसके नाम से पुकारा जाय। भगवान ने भव्यरूप से राक्षस की इच्छा स्वीकार की। उसे अपने बहुओं में लिया। तभी से इस पर्वत का नाम वृषभाद्रि पडा। कृतयुग में यह वृषभाचल नाम से व्यवहृत रहा है। (भविष्योत्तर पुराण, अध्याय-1, श्लो. 40 - 68. इस गाथा को जनक के पुरोहित शतानंद ने राजा जनक को सुनाया था।)

कनकाद्रि : इस पर्वत का आकार सुवर्ण कुंभ (कनक घटा) के रूप में होने के कारण, यह नाम पड़ा।

नारायणाद्रि : नारायण नामक एक ब्राह्मण ने इस पर्वत पर घोर तपस्या की थी। उसके नाम पर ही यह नारायणाद्रि हुआ।

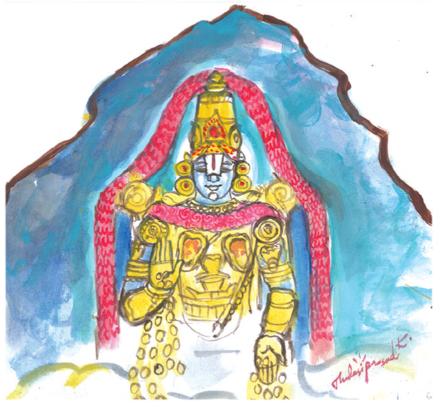

(भविष्योत्तर पुराण ने इस पर्वत को चार युगों में चार नामों से ख्यात बताया है : वृषाद्रि या वृषभाद्रि, अंजनाचल, शेषाचल और वेङ्कटाचल। वराह पुराण भाग - 1, अ. 1, श्लो. 57 - 58 के अनुसार कृतयुग में यह अंजनाद्रि, त्रेतायुग में नारायणाद्रि, द्वापरयुग में सिंहाद्रि तथा कलियुग में वेङ्कटाचल या वेङ्कटाद्रि नामों से प्रसिद्ध रहा है।)

वैकुण्ठाद्रि : विष्णु भगवान के अधिवास धाम वैकुण्ठ से लाकर इस पर्वत को यहाँ प्रतिष्ठित करने के कारण यह वैकुण्ठाद्रि नाम से प्रसिद्ध है।

सिंहाचल : नृसिंह का अवतार लेकर राक्षस हिरण्यकशिप के पुत्र प्रह्लाद की रक्षा हरि ने की है। इस घटना का प्रान्त यही माना जाता है। इसीलिए यह सिंहाचल बन पड़ा।

अंजनाद्रि : वनचरों के राजा केसरी की पत्नी थी अंजनादेवी। संतान के लिए उन्होंने मतंग महर्षि से मार्ग की सलाह माँगी। महर्षि ने कहा कि पंपानदी (हंपी के पास) के किनारे नृसिंहाश्रम के पास से पचास योजन की दूरी पर वेङ्कटाचल पर आकाश गंगा की झरी के पास जाकर बारह वर्ष की तपस्या करेंगी तो उनकी इच्छा पूरी होगी। यह स्थान नारायण गिरि के उत्तर में एक कोस की दूरी पर है। तपस्या के

फलस्वरूप अंजनादेवी को एक पुत्र होगा। मतंग ऋषि की सलाह लेकर अंजनादेवी वेङ्कटाद्रि पहुँची। वहाँ की स्वामिपुष्करिणी में पवित्र स्नान किया। उसकी प्रदक्षिणाएँ की। वहाँ के अश्वर्थ वृक्ष की भी प्रदक्षिणा की। स्वामिपुष्करिणी तट पर विराजमान वराहस्वामी का दर्शन किया। फिर वे आकाशगंगा तीर्थ पहुँची। अपने पति केसरी और मुनियों के अशीर्वाद लेकर अपने बारह वर्ष की तपस्या आरंभ की। तपस्या के प्रथम वर्ष में अंजनादेवी ने केवल जल ग्रहण किया। वायुदेव ने प्रसन्न होकर इसके बाद हर दिन एक फल दिया। बारहवें वर्ष के अंत में वायुदेव ने उन्हें एक विशेष फल प्रदान किया। इससे वे गर्भवती हुईं। उनको एक पुत्र हुआ। नाम रखा गया आंजनेय। आगे उन्हें हनुमान नाम मिला। इसी हनुमान ने देवताओं की सहायता की। अंततः वे राम से मिले और उनके अपर भक्त हो गये। अंजनादेवी के लिए योग्य पवित्र तपस्या स्थल बनने के कारण इस पर्वत को त्रेतायुग में अंजनाचल नाम मिला।

(इस गाथा का पूरा विवरण भविष्योत्तर पुराण के अध्याय - 1 के श्लोक 68 - 84 में मिलता है। वराह पुराण भाग - 1 अध्याय- 4 के श्लोक 28 - 29 में अंजनादेवी की तपस्या और हनुमान के जन्म का संकेत मात्र मिलता है।)

वराहाद्रि : वराह इस क्षेत्र में स्थित रहने के कारण यह *वराह क्षेत्र* है।

नीलगिरि : वानरों के प्रधान 'नील' का वास स्थान होने के कारण यह नीलगिरि नाम से प्रसिद्ध है।

वेङ्कटाचल या वेङ्कटाद्रि : अमृत अर्थ से युक्त धातु "वें " है और "कट " मानी ऐश्वर्य से जुडकर "वेङ्कट" शब्द बना है। यह पर्वत संसार की विभूतियों और स्वर्ग प्राप्ति प्रदान करने की शक्ति से मण्डित होने के कारण "वेङ्कटाद्रि" नाम से अभिहित है।

वेङ्कारो अमृत बीजस्तु कटम ऐश्वर्य मुच्यते।
अमृत ऐश्वर्य संघत्वाद वेङ्कटाद्रि रिति स्मृतः॥

(वराह पुराण, भाग - 1, अ. 4, श्लो. 31)

"वें " और "कट " धातुओं के लिए एक और दूसरा अर्थ भी निष्पन्न किया गया है। "वें " का अर्थ सर्वपाप और "कट " का अर्थ 'काटनेवाला या नाश करनेवाला'। इस पर्वत ने श्रीकालहस्ति के माधव नामक एक ब्राह्मण के सभी पापों का नाश किया था। यह कलियुग में घटित घटना है। फलतः इस अद्रि को 'वेङ्कटाद्रि' नाम मिला। इस गाथा का विस्तार पूर्वक वर्णन ब्रह्माण्ड पुराण और भविष्योत्तर पुराण में मिलता है। ब्रह्माण्ड पुराण में कहा गया है कि ऋषियों द्वारा यह नाम प्रचार में आया है। उन ऋषियों ने भृगु महर्षि के द्वारा यह पवित्र गाथा सुनी थी। यह 'वेङ्कटाचल माहात्म्यम्' में भी वर्णित है। भविष्योत्तर पुराण के अनुसार चतुरानन (ब्रह्म) से कलियुग में यह नाम प्रचार किया गया है।

क्रमशः

सनातन वैद्य में नागरमोथा

तेलुगु मूल - डॉ.सी.मधुसूदन शर्मा

हिन्दी अनुवाद - डॉ.एस.हरि,
मोबाइल - ९३९८४५४१६८

हमारे स्वास्थ्य परिरक्षण के लिए प्रकृति माता ने कुछ आहार पदार्थ और कुछ औषध पदार्थ हमें प्रदान किया है। उस प्रकार के पदार्थों में औषध के रूप में उपयोग किया जानेवाला 'नागरमोथा' के बारे में अब हम जान लेंगे कि जिसका सदुपयोग विभिन्न अस्वस्थ समस्याओं के लिए किस तरह किया जा सकता है?

नागरमोथा छोटे-छोटे पौधों की जडी-बूटी है। यह एक प्रकार का खरपतरवार है जो धान की फसल के साथ बहुतायत पाया जा सकता है। इसे मोथा की बूटियाँ भी कहते हैं। संस्कृत में इसे मुस्ता कहते हैं।

"मुस्यति खंडयति रोगान् मुस्तः" के वचनानुसार रोगों का निवारण करने से इसे मुस्ता भी कहते हैं। इसी तरह ठंडा करनेवाले गुण के कारण हिम, सुगंधित होने के कारण सुगंधी, जल प्रदेशों में प्राप्त होने के कारण जल मुस्ता इसे आदि संस्कृत नाम भी हैं।

सैपरेसी नामक वृक्ष परिवार से संबंधित इन पौधों का शास्त्रीय नाम है "सैपरस रोटेंडस", अंग्रेजी में इसे 'नेटग्रास', हिंदी में 'मोथा' के नाम से पुकारते हैं।

सूखे नागरमोथा के कंद, मोथा के चूर्ण के साथ-साथ कई जड़ी-बूटियाँ आयुर्वेदिक औषधालय में प्राप्त होती हैं।

अधिक ताप से बचने के लिए :

नागरमोथा का चूर्ण, सुगंधी दूध का चूर्ण, अजवायन का चूर्ण १० ग्राम की मात्रा में लेकर ३० ग्राम शक्कर मिलाकर एक डिब्बे में रख लेना चाहिए। सुबह-शाम आधा या पूरा चमच १०० मि.ली. पानी में मिलाकर पीते रहने से अधिक ताप कम होता है। अधिक ताप से होने वाले आँखों के जलन, मूत्र में जलन, दर्द आदि समस्याएँ भी कम होती हैं।

मधुमेह के रोगियों को इस औषध के योग में शक्कर के बिना पाव चमच से लेकर आधा चमच तक उपयोग कर लेना चाहिए।

शरीर की बदबू कम करने के लिए :

५० ग्राम की मात्रा में नागरमोथा का चूर्ण, अजवायन का चूर्ण मिलाकर रख लें। एक बल्टी पानी में २-४ चमच का चूर्ण मिलाकर स्नान करते रहना चाहिए।

साधारण खाँसी के लिए :

२० ग्राम नागरमोथा के चूर्ण में, २० ग्राम काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर रख लें। हर दिन २-३ बार एक ग्राम चूर्ण में पर्याप्त मात्रा में शहद मिलाकर सेवन करते रहना चाहिए।

जोडों के दर्द के लिए :

५० ग्राम नागरमोथा का चूर्ण, ५० ग्राम अश्वगंध चूर्ण मिलाकर रख लें। एक बार २०० मि.ली. पानी में एक चमच चूर्ण डालकर १०० मि.ली. काढ़ा बनने तक उबालकर उतार लें। ठंडा होने के बाद छानकर एक-दो चमच शहद मिलाकर सेवन करते रहना चाहिए।

अधिक प्यास से बचने के लिए :

नागरमोथा का चूर्ण १० ग्राम, इलाची का चूर्ण १० ग्राम मिलाकर रख लें। हर दिन दो बार एक ग्राम चूर्ण में पर्याप्त मात्रा में शहद मिलाकर पीते रहने से अधिक प्यास की समस्या कम होने के साथ-साथ मुंह की बदबू भी कम होती है।

अधिक वजन से बचने के लिए :

१०० ग्राम नागरमोथा के चूर्ण में अजवायन का चूर्ण २५ ग्राम मिलाकर रख लें। सुबह-शाम हर वक्त २-३ ग्राम चूर्ण में पर्याप्त मात्रा में शहद मिलाकर सेवन करते रहने से वजन कम होने के, साथ-साथ अधिक वजन से होनेवाले जोडों के दर्द भी कम होते हैं।

आई.बी.एस.नामक दस्त समस्या कम करने के लिए :

रोजाना दो बार हर वक्त २०० मि.ली. पानी में ५ ग्राम नागरमोथा का चूर्ण मिलाकर १०० ग्राम काढा बनने तक उबालकर उतारलें। ठंडा होने के बाद छानकर सेवन करते रहने से खाने के तुरंत बाद दस्त होना, मानसिक दबाव, तनाव के समय दस्त होना, यात्रा के समय में दस्त होना, असंपूर्ण दस्त होना कुछ पदार्थ खाने से दस्त होना, शारीरिक विरोधी चीजों से दस्त होना आदि विविध प्रकार के दस्त कम हो जाते हैं।

त्वचा की बीमारियों के लिए :

नागरमोथा का चूर्ण, स्वच्छ हल्दी का चूर्ण २५ ग्राम की मात्रा में मिलाकर सुबह-शाम हर वक्त १-२ ग्राम चूर्ण में पर्याप्त मात्रा में शहद या ५० मि.ली. गरम दूध में मिलाकर सेवन करते रहने से दाद, खाज, खुजली आदि त्वचा संबंधी समस्याएँ कम होती हैं।

षडंग पानी, गंगाधर चूर्ण, मुस्तकारिष्टा जैसे प्रमुख आयुर्वेदिक औषधों की तैयारी में चुक्कततैल, नीलवेंबु, कुडिनीर, करुणाय लेह्यं आदि तमिलनाडु के प्रसिद्ध प्राप्त सिद्ध वैद्य औषधों की तैयारी में भी नागरमोथा का उपयोग करते हैं।

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

**कडलळवाय दिशै येट्टिनुळ्लुम्, कलियिरुळे
मिडैदरु काल त्तिरामानुजन्, मिक्क नान्मरैयिन्
शुडरोळियाल् अव्विरुळै त्तुरन्दिलनेल्, उयिरै
उडैयवन् नारणने न्नरिवारिल्लै उत्तुणर्न्दे ॥५९॥**

चतुस्सागरपर्यन्तासु दिशास्वष्टस्वपि कलितिमिरसाम्राज्यसमृद्धिसमये भगवान् रामानुजोऽवतीर्य सर्वोतुंगप्रमाणभूतचतुर्वेदात्म कप्रदीपप्रकाशतस्त-त्तादृशतिमिरनिरासं यदि नाकरिष्यत्तर्हि सर्वस्वामी नारायण एवेति तत्त्वार्थं न हि कोऽप्यवागमिप्यत् ॥

चतुस्सागरपर्यंत आठों दिशाओं में जब कलि-अंधकार ही व्याप्त हुआ था, तब श्रीरामानुज स्वामीजी ने अवतार लेकर, चारों वेदों के उज्वल ज्योति से उस अंधकार को यदि नहीं मिटा दिया होता, तो कोई भी मानव यह अर्थ नहीं समझ सकता कि श्रीमन्नारायण समस्त जीवों के प्रभु हैं। (विवरण- पूर्वगाथा में इतना ही बताया गया कि श्रीरामानुज स्वामीजी ने जीवब्रह्मों को ऐक्य बतानेवाले अद्वैत मत का खंडन किया; परंतु खंडन का प्रकार नहीं बताया गया। अब इस गाथा में यह अर्थ बताया जाता है कि वास्तव में भगवान श्रीमन्नारायण समस्त जीवों के स्वामी हैं। अर्थात् जीवब्रह्मों का संबंध सर्वात्मना अभेद नहीं, किंतु स्वस्वामिभाव है।)

श्रीरामानुज स्वामीजी अवतार नहीं लेते तो यह संसार नहीं समझ सकता कि ''श्रीमन्नारायण ही समस्त जीवों के प्रभु हैं।''

क्रमशः

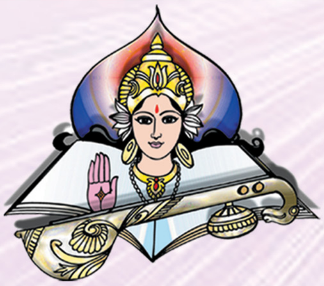

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

लेखक - महामहोपाध्याय काशिकृष्णाचार्य

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

मोबाइल - ९९४९८७२१४९

नवमः पाठः - नौवां पाठ
(कृ-धातुः = कृ-धातु)

1. देवः = परमेश्वर
2. किमर्थम् = क्यों
3. करोति = कर रही हैं
4. जनकः = पिताजी
5. एव = जोर दिया करते थे (खुद)
6. करोषि = कर रहे हैं (तुम)
7. अग्रजः = भय्या
8. किल = खेल
9. करोमि = (मैं) करते हुए

प्रश्न :

1. देवः कुत्र अस्ति?
2. सः अत्र अस्ति।
3. अग्रजः किं करोति?
4. किं वा?
5. त्वं किं करोषि?
6. अहम् अत्रासम्।
7. यूयं किमर्थं तत्र स्थ?
8. ते एव तत्रासन् किल।
9. यूयं तत्र किमर्थं नास्त?
10. अहं तत्रैव अस्मि।

जवाब :

1. परमेश्वर कहाँ है?
2. वह यहाँ है।
3. भय्या क्या कर रही हैं?
4. क्या?
5. तुम क्या कर रहे हो?
6. मैं यहाँ बन रहें।
7. आप वहाँ क्यों हो?
8. क्या वे वहाँ हैं खुद!
9. तुम वहाँ क्यों नहीं हो?
10. मैं वहीं था।

प्रश्न :

1. भगवान कहीं है।
2. वह कई जगहों पर है।
3. आप अभी कहाँ हैं?
4. कोई क्या कर रहा है?
5. वे सभी वहाँ होने चाहिए।
6. आप खुद क्या कर रहे हैं?
7. हमें खुद यहाँ होना चाहिए।
8. यहाँ कोई नहीं है?
9. तुम यहाँ नही हैं न।
10. मैं यही हूँ।

जवाब :

1. देवः एकत्र अस्ति।
2. सः अनेकत्र अस्ति।
3. यूयं अधुना कुत्र स्त?
4. कः किं वा करोति?
5. ते सर्वे तत्र स्युः।
6. त्वमेव करोषि किम्?
7. वयमेव अत्र स्याम।
8. केवा अत्र न सन्ति?
9. त्वम् अत्र नासि किल।
10. अहमत्रैव अस्मि।

पत्थर की शक्ति

- श्रीमती के प्रेमा रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

वेदपुरी नामक गाँव में उस दिन बडा मेला चल रहा था। उस दिन गाँव के लोगों की सहायता से और उनकी इच्छा से बनाये गये मंदिर का कुंभाभिषेक बडे जोर से हो रहा था। मंदिर में वेदागम नियम के अनुसार स्थापित भगवान विष्णु की मूर्ति के दर्शन के लिए लोग लंबे खतार में खडे होकर आगे बढ रहे थे। प्रसिद्ध साधु हरिदास अपने शिष्यों के साथ आकर सारा प्रबंध कर रहे थे। उनके बाद वे वहाँ बडी संख्या में इकट्ठे लोगों के सामने भगवान की महिमा के बारे में प्रवचन दे रहे थे।

उस समय बडे पुलिस अधिकारी प्रकाश उस ओर जा रहे थे। भगवान पर विश्वास न रखने वाले नास्तिक प्रकाश ने सोचा कि एक पत्थर की मूर्ति की पूजा करने पता नही क्यों इतने लोग आते हैं? तब तक वे हरिदास के प्रवचन चल रहे मंच के निकट आ पहुँचे। उस समय साधु अपना प्रवचन पूरा कर चुके थे। तब पुलिस अधिकारी प्रकाश ने उनको देखकर कहा, ''मुझे बडा संदेह है। क्या आप उसका जवाब दे सकते हैं?'' यह सुनकर साधु ने उनको मंच पर बुलाया और अपने निकट बिठा दिया। फिर पूछा, ''आपका क्या संदेह है?''

नास्तिक प्रकाश ने साधु से पूछा, ''महाराज! इस मंदिर में होने वाला उस मूर्ति का पत्थर इसके पहले कहीं पडा हुआ था। उसे ले लाकर, एक रूप देकर, मंदिर के अंदर स्थापित करते हैं। हमसे स्थापित पत्थर को हम नमन करते हैं और उस पत्थर से मेरी पसंद देना, मेरी रक्षा करना जैसी प्रार्थना भी करते हैं। इससे बढकर कोई बडी बेवकूफ़ इस दुनिया में हो सकती है? कहीं पडे पत्थर को वह शक्ति कहाँ से आयी होगी? वह पत्थर कैसे दूसरों की रक्षा करेगा?''

नास्तिक प्रकाश की बात को सुनकर साधु ने क्रोध नहीं किया। मगर बडे निश्चल मन से उसको देखकर पूछा, ''आप पुलिस अधिकारी बनने के पहले क्या कर रहे थे?''

प्रकाश ने जवाब में कहा, ''मैं बेकार और बिना कोई काम-काज दिन बिता रहा था।''

फिर साधु ने पूछा, ''बिना काम-काज के समय किसी ने आपका आदर किया?''

अधिकारी प्रकाश ने कहा, ''नहीं, किसी ने भी मेरी परवाह नहीं की।''

तुरंत साधु ने कहा, ''पुलिस अधिकारी का पद मिलते ही आपको प्राप्त आदर और आपकी आज्ञा और हस्ताक्षर का आदर कहाँ से मिले थे, इस पर जरा सोचकर देखिये।''

''वैसे ही कहीं पडे उस भारी पत्थर को, नाचीज पत्थर को ले आकर रूप देकर, वेदागम नियमानुसार मंदिर में उसकी प्रतिष्ठा करके मंत्रों के उच्चारण से उसकी पवित्रता बढाकर स्थापित करते हैं। लोग भी बडे विश्वास के साथ उस मूर्ति से प्रार्थना करते हैं। तब उस पत्थर को वह शक्ति, जो भगवत शक्ति अपने आप आ जाती है और वह प्रार्थना करने वालों की रक्षा करती है।''

साधु के जवाब से संतुष्ट उस पुलिस अधिकारी प्रकाश ने उनसे विदा लेकर सीधे मंदिर के अंदर गया और भगवान की मूर्ति के सामने खडे होकर मन लगाकर प्रार्थना करने लगा।

चित्रकथा

वेदव्यास आविर्भाव

तेलुगु में - श्री डी.श्रीनिवास दीक्षितुलु
हिन्दी में - डॉ.एम.रजनी
चित्र - श्री के.तुलसीप्रसाद

दासराज मछुआरियों का राजा था। मत्स्यगंधा उनकी पालित पुत्री थी। यमुना नदी में नाव को चलाते हुए लोगों को नदी पार कराना उनकी पेशा थी। एक दिन

अगली पत्रिका में... एक और कहानी के बारे में दर्शन करेंगे... तरेंगे! | लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु! | स्वस्ति।

'क्विज'

आयोजक - कुमारी एन.प्रत्यूषा

१) पांडवों ने इन्द्रप्रस्थ नगर कहाँ किस वन में बनाया था?
अ) द्वैत आ) काम्यक इ) खांडव ई) सौगंध

२) उस राक्षसी का क्या नाम था जिसने दो टुकडों में विभक्त शिशु जरासंध को एक में जोड दिया था?
अ) हिडिंबा आ) सालकंटक इ) पूतना ई) जरा

३) श्रीकृष्ण के शंख का क्या नाम था?
अ) विजय आ) पाञ्चजन्य इ) जलज ई) उद्घोष

४) रामायण के प्रथम कांड का नाम क्या है?
अ) बालकांड आ) युद्धकांड इ) उत्तरकांड ई) अरण्यकांड

५) किस ऋषि के जन्म दिन पर गुरुपूर्णिमा मनाया जाता है?
अ) विश्वामित्र आ) वेद व्यास इ) किंदम ई) पराशुरु

६) वसुषेण किसका नाम था?
अ) युधिष्ठर आ) श्रीकृष्ण इ) अर्जुन ई) कर्ण

७) रामायण किस युग से संबंधित है?
अ) कलियुग आ) त्रेतायुग इ) द्वापरयुग ई) सत्ययुग

जवाब
१) इ २) ई ३) आ ४) अ ५) आ ६) ई ७) आ

चित्रलेखन

इस चित्र को रंगों से अब भरें क्या?

बगल में सूचित चित्र को नीचे के डिब्बों में खींचिये-

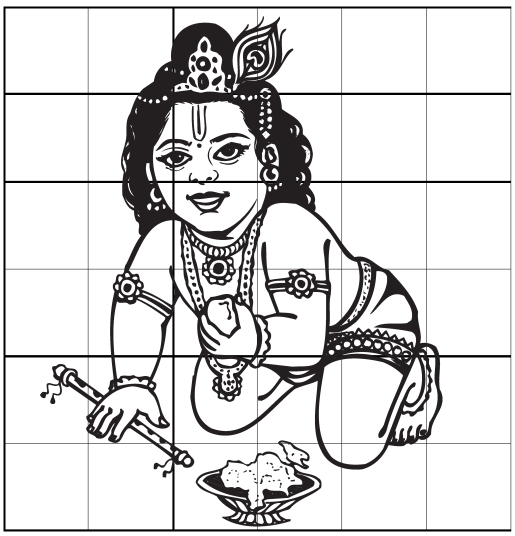

Edited and Published on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams by **Prof.K.Rajagopalan,** Publisher & Chief Editor, T.T.D. and Printed at Tirumala Tirupati Devasthanams Press by **Sri P.Ramaraju,** M.A., Special Officer (Press & Publications), T.T.D., Tirupati-517 507.

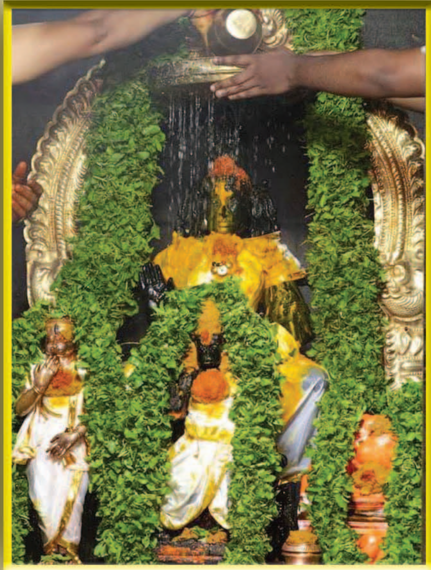

तिरुमल स्थित आकाशगंगा तीर्थ के पास प्रप्रथम बार संपन्न
हनुमज्जयंती समारोह के दृश्य।
२०२१, जून ०४

तिरुमल वसंतमंडप में श्रीहरि को संपन्न सहस्त्रनामार्चन पूजा महोत्सव में
भागलेते हुए ति.ति.दे. अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डी, आई.डी.ई.एस.,
२०२१, जुलाई २०

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY
Published by Tirumala Tirupati Devasthanams

SAPTHAGIRI
Volume:52, Issue:02
July-2021

श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का साक्षात्कार वैभवोत्सव, श्रीनिवासमंगापुरम्
२०२१, जुलाई १३ से १५ तक